आधुनिक तॅलुगु कविता

प्रथम भाग

: सम्पादक :

डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

आधुनिक तॅलुगु कविता

प्रथम भाग

प्रकाशक :
आंध्र प्रदेश साहित्य अकादमी
कला भवन,
हैदराबाद-४

मुद्रक :
हिन्दी प्रचार प्रेस
मद्रास-१७

प्रथम संस्करण
दिसम्बर, १९६९

मूल्य :
रु. ७-५०

अरुणोदय

आंध्र कविता साहित्य का यह हीरक-जयंती का वर्ष है। नवीन आंध्र कविता के गगन में यद्यपि सन् 1900 में डॉ. कट्टमंचि रामलिंग रॅड्डि जी के 'मुसलम्म मरणमु' के लघुकाव्य के साथ प्रथम प्रभात की रेखा फूटी तथापि 1909 में श्री रायप्रोलु सुब्बाराव जी के 'ललिता' के प्रकाशन और 1910 में श्री गुरजाड अप्पाराव जी के "मुत्यालसरालु" के आविष्कार के साथ अरुणोदय और सूर्योदय हुआ। इसीलिए 1909 से 1969 तक की कालावधि को दृष्टि में रखकर हीरक जयंती का वर्ष कहता हूँ।

इस प्रकार आधुनिक आंध्र कविता 60 वर्ष की उपज है। भाव-कवि, अभ्युदय कवि, अतियथार्थवादी कवि, गद्यगीत कवि आदि कृषकों ने इन साठ वर्षों में साहित्य क्षेत्र में स्वर्ण उपजाया। हिन्दी में छायावाद और रहस्यवाद के समान तॅलुगु में भाव कविता का आंदोलन चला। श्री रायप्रोलु के साथ यह आंदोलन पल्लवित हुआ और सर्वश्री अब्बूरि, वेंकटपार्वतीश्वर कवि, विश्वनाथ, कृष्णशास्त्री, बसवराजु, नंडूरि, दुव्वूरि प्रभृति कवियों के साथ विकसित और फलित हुआ। लगभग तीन दशकों तक तॅलुगु देश में भाव-कविता का आंदोलन चला। कुछ लोगों ने भाव-कविता को केवल प्रणय-कविता का पर्यायवाची भी मान लिया। किंतु वास्तविकता यह नहीं है। भाव-कविता उन अनेक काव्य प्रक्रियाओं का आलवाल है जिनमें काल्पनिकता की गंध (Romantic spirit) अधिक है। भाव-कविता वह व्यापक काव्यांदोलन है जिसने एक साथ प्रणय-कविता, प्रकृति कविता, देश भक्ति कविता, समाज-सुधार कविता आध्यात्मिक-कविता, मिसाइल पॉइट्री, स्मृति गीत (एलिजीस) आदि अनेक प्रक्रियाओं को जन्म दिया।

कविता के तीन अंग होते हैं, वस्तु, भाव और रचना (छंद, भाषा, शैली)। इन तीनों अंगों में वस्तु और रचना की अपेक्षा भाव-

कविता ने भाव को प्रधानता दी। प्रेयसी की वियोगानुभूति से व्यथित घास के फूल, वियद्धुनी की संभावना करनेवाले कॉण्डवीडु या अमरावती, नित्यप्रति आँखों के सामने गुजरनेवाली अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बीमारियाँ आदि ने अंतरंग को कुरेदकर किसी मधुर विषाद स्मृति को मन में जगाकर प्राय: आत्माश्रयी रूप में जिन भाव धाराओं को बहाया, वे ही भाव गीत हैं। यह तीव्र भावों की धारा ही भाव कविता का प्राण है। इस कोटि के कवि भाव कवि हैं। इन साठ वर्षों में लगभग तीस वर्ष भाव कविता के हैं। इसी दृष्टि से आधुनिक आंध्र कविता का प्रतिनिधित्व करने के लिए दो भाग प्रकाशित करने का निश्चय किया गया है। प्रथम भाग भाव-कविता की अनेक शाखाओं का प्रतिनिधित्व करता है और दूसरा भाग अभ्युदयवाद (प्रगतिवाद) आदि शाखाओं का। यह संग्रह भाव-कविता से संबंधित कविताओं का संकलन है। इसको प्रकाशित करने के लिए कटिबद्ध आँध्र प्रदेश साहित्य अकादमी का प्रयत्न बहुत प्रशंसनीय है। मैं आशा करता हूँ कि यह प्रयत्न हिन्दी के द्वारा समग्र भारत को तेलुगु की कविता-प्रक्रियाओं से परिचित कराकर भावात्मक एकता में सहायक होगा।

—डॉ० सी. नारायण रेड्डि

भूमिका

आधुनिक तॅलुगु कविता की पृष्ठभूमि :

सन् सत्तावन के प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम के बाद जैसे-जैसे भारत पर अंग्रेज़ी शासन के शिकंजे मज़बूत होते गये वैसे-वैसे उनसे छुटकारा पाकर स्वतंत्र होने की अभिलाषा भी फिर से धीरे-धीरे भारत के शिक्षित वर्ग के हृदय में प्रादुर्भूत होने लगी जिसके फलस्वरूप आगे चलकर राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म हुआ जिसके द्वारा साधारण जनता के मन में स्वतंत्रता-प्राप्ति की इच्छा पैदा की गयी थी। बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक से लेकर गांधीजी का जब भारत के राजनैतिक क्षितिज में उदय हुआ तब से यह महान राष्ट्रीय कार्य सुनियोजित रूप से चलने लगा और स्वतंत्रता का संदेश घर घर पहुँचने लगा। इसमें देश के नेताओं और उनके अनुयायियों को अनेक कष्ट झेलने पड़े और आत्म-त्याग करने पड़े। इसके विपरीत अंग्रेज़ों की दमन नीति का चक्र भी ज़ोरों से चलने लगा। तब से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक कांग्रेस और गांधीजी की राजनीति ने कितनी करवटें कैसे बदलीं, वह सब इतिहास का विषय है। किंतु उसका प्रभाव भारतीय साहित्य पर बहुत पड़ा जिसके कारण उसके स्वरूप और गति विधियों में अनिवार्य अंतर आ गया है जो भारत भर की भाषाओं के साहित्य में प्राय: समान रूप से परिलक्षित होता है। राजनैतिक क्षेत्र में नेताओं के प्रबोधात्मक व्याख्यानों के द्वारा स्वतंत्रता का जो संदेश साधारण जनता तक पहुँचाने का प्रयत्न किया गया वह कवियों और लेखकों की वाणी में मुखरित हो उठा और धीरे-धीरे देश की जनता प्रबुद्ध होने लगी। तॅलुगु के आधुनिक काव्य साहित्य के संबंध में भी यह कथन पूर्णत: घटित होता है। हाँ, राजनैतिक दृष्टि से आधुनिक तॅलुगु काव्य साहित्य की एक विशेषता है। आंध्र प्रदेश में जहाँ समग्र भारत की स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए उत्कट व्यग्रता थी वहाँ स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत अपने साहित्य और संस्कृति के सम्यक् विकास के हेतु अपना

एक अलग अस्तित्व भारत के अंग के रूप में बनाने का दृढ़ संकल्प भी लक्षित था जिसका प्रतिबिंब भी तत्कालीन साहित्य के दर्पण में झलकता है। गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस ने भावी स्वतंत्र भारत का जो राजनैतिक ढाँचा तैयार किया था उसमें इसके लिए भाषावार प्रांत विभाजन की योजना के रूप में अनुकूल वातावरण भी बना था।

आधुनिक युग में अंग्रेज़ी शिक्षा का जो प्रभाव भारत पर पड़ा वह प्रधानत: दो क्षेत्रों में दिखाई पड़ता है; एक तो धार्मिक क्षेत्र में जिसके फल स्वरूप सामाजिक क्षेत्र में भी, और दूसरे साहित्यिक क्षेत्र में। स्वामी दयानंद सरस्वती और राजाराम मोहनराय जैसे मनीषियों की दृष्टि ने अंग्रेज़ी शिक्षा से प्रभावित होकर अपने परंपरागत हिन्दू समाज में मानवता की दृष्टि से कुछ धार्मिक और सामाजिक सुधारों की आवश्यकता का अनुभव किया जिसके फलस्वरूप आर्यसमाज और ब्रह्मसमाज के आंदोलन चले जिनका प्रभाव तॅलुगु साहित्य पर पड़ा, विशेषकर ब्रह्मसमाज के आंदोलन का। इन दोनों सुधारकों ने हिन्दू समाज में तब तक फैले संकीर्ण विचारों को दूर कर उस धर्म को विश्व-जनीनता प्रदान करने का स्तुत्य प्रयत्न किया जिसका प्रभाव आगे चलकर गाँधीजी ने भी ग्रहण किया। आंध्र प्रदेश में सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में इन आंदोलनों का प्रभाव श्री कंदुकूरि वीरेशलिंगम् पंतुलु और श्री गुरजाड अप्पाराव पर खूब पड़ा जो सुधारवाद की दृष्टि से आधुनिक समाज और साहित्य के युगप्रवर्तक थे। हिन्दी के आधुनिक साहित्य में जो स्थान भारतेंदु हरिश्चंद्र का है, वही आधुनिक तॅलुगु साहित्य में श्री वीरेशलिंगम् पंतुलु का है।

अंग्रेज़ी साहित्य के अध्ययन के साथ-साथ तॅलुगु के साहित्यिक क्षेत्र में भी बड़ा परिवर्तन उपस्थित हुआ। वर्ड्सवर्थ, शेली, कीट्स आदि स्वच्छंदतावादी कवियों के अध्ययन ने तॅलुगु के कवियों की भाव भूमि को विशाल बना दिया। अंग्रेज़ी कविता की भावधारा, काव्यरूप, अभिव्यक्ति आदि ने उनको आकर्षित किया जिससे आधुनिक तॅलुगु कविता की धारा में जिसका प्रारंभ इस रूप में सन् 1900 के लगभग

माना जा सकता है, एक विशेष मोड़ आया -जहाँ से एक शाखा भाव-कविता कही गयी है जिसका स्वरूप प्रस्तुत संकलन उपस्थित करता है और जो हिन्दी की छायावादी और रहस्यवादी कविता के समकक्ष है। भाव कविता और छायावादी कविता की भाव, भाषा और शैली गत सब विशेषताएँ समान हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि अंग्रेजी स्वच्छंदतावादी काव्य साहित्य का जितना और जैसा प्रभाव हिन्दी पर पड़ा है उतना और वैसा प्रभाव तॅलुगु पर भी पड़ा है। इसके अतिरिक्त रवींद्रनाथ ठाकुर की कविता ने भी इस धारा की तॅलुगु कविता को बहुत प्रभावित किया जिसका विकास बीसवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में सर्वाधिक हुआ। सूत्ररूप में यही वह पृष्ठभूमि है जिसपर तॅलुगु की भाव-कविता की धारा प्रवाहित हुई और साहित्यिक क्षेत्र को भाव, भाषा, विराट कल्पना, अतींद्रिय सौन्दर्य की भावना, अभिव्यक्ति आदि की दृष्टियों से बहुत उर्वर बना दिया। अस्तु।

तॅलुगु की आधुनिक कविता उस उत्तर मध्यकालीन काव्य-साहित्य की, जो अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों में शास्त्र निबद्ध दृष्टि से भाव पक्ष को प्रधानता न देकर निर्जीव रूप से निर्मित हुआ था, प्रतिक्रिया के रूप में प्रादुर्भूत हुई जिसके उष:काल में तिरुपति वेंकटेश्वर नामक कविद्वय उदित हुआ और देश-भर में लगभग तीस-चालीस वर्षों तक कविता का उत्सव-सा मनाया था। कविता को राज दरबारों से निकालकर साधारण जनता तक पहुँचाने का श्रेय इसी कविद्वय को मिला है। भाषा और शैली की दृष्टि से इनकी कविता में यद्यपि बहुत सरलता पायी जाती है जिससे साधारण पढ़ा-लिखा आदमी भी उसका सुगमता से रसास्वादन कर सकता है, तथापि विषय, छंदोरूप आदि पुरानी परंपरा के अनुरूप ही मिलते हैं। देश भर के राजाओं, जमींदारों और रईसों के दरबारों में जाकर अपनी आशु कविता और अवधान कविता के द्वारा उन्होंने कविता को सर्वजनसुलभ बना दिया। इसमें यद्यपि पुरानी भावधारा प्रधान रूप से दृष्टि गत होती है किन्तु फिर भी बदलती हुई सामाजिक मान्यताओं की झलक भी मिलती है। इनकी

कविता अधिकतर वस्त्वाश्रयी है जिसमें इनका निर्भीक व्यक्तित्व लक्षित होता है। इनकी 'कामेश्वरी शतक', जैसी आत्माश्रयी कविता और अवधान कविता में भी वह नया सौंदर्य बोध नहीं मिलता जो आगे चलकर भाव-कविता का प्रधान तत्व बन गया है। ये दोनों कवि आगे चलकर बहुत से कवियों के गुरु बने।

यहाँ अवधान कविता का संक्षिप्त परिचय देना आवश्यक है, जो तॆलुगु कविता की एक विशेष प्रक्रिया है। "अवधान" एक ऐसा कार्य-क्रम है जिसमें अवधानी कवि एक साथ अनेक कार्य ध्यानपूर्वक करता है जिनमें कविता-रचना प्रधान है। 'अवधान' प्रधानत: दो प्रकार का होता है, अष्टावधान और शतावधान। अष्टावधान में कवि को एक साथ आठ विषयों का ध्यान रखकर पृच्छकों को उत्तर देना पड़ता है। विद्वानों की सभा जुड़ती है जिसमें आठ विद्वान पृच्छक नियुक्त किये जाते हैं जो अवधानी कवि से भिन्न-भिन्न विषयों पर प्रश्न करते हैं, और उसका ध्यान बँटाने का प्रयत्न करते हैं। कोई यह पूछता है कि कुछ निश्चित अक्षरों का प्रयोग करके फ़लाने विषय पर पद्य कहिए। इसे न्यस्ताक्षरी कहते हैं। जब कवि उसका उत्तर दे रहा होता है तब दूसरा कुछ शब्दों और अक्षरों का क्रम बदलकर कहता है कि इनका उपयोग करके फ़लाने विषय पर पद्य कहिए। इसे व्यस्ताक्षरी कहते हैं। कवि को उन अस्तव्यस्त शब्दों और अक्षरों का क्रम ठीक करके पद्य कहना पड़ता है। इसी बीच में तीसरा पूछता है कि अमुक-अमुक अक्षरों को बचाकर अमुक विषय पर पद्य कहिए। इसे निषेधाक्षरी कहते हैं। बीच-बीच में कोई अनेक विषयों पर बेसिर पैर की बातें पूछकर शंका समाधान माँगते हुए कवि का ध्यान बँटाने का प्रयत्न करता है। यह अकाश-पुराण कहलाता है। जब कवि का मन इन बातों में लगा रहता है तब बीच-बीच में कोई घंटा बजाता रहता है और कोई उसकी पीठ पर फूल मारता रहता है। अंत में अवधानी को यह बताना पड़ता है कि कितनी बार घंटा बजा और कितने फूल उसकी पीठ पर पड़े। ये दोनों क्रियायें घंटाराव और पुष्प परिगणना कही जाती हैं। एक और व्यक्ति बीच में

पद्य में कोई समस्या देकर उसकी पूर्ति करने को कहता है। यह समस्या-पूर्ति है। इन सबमें उलझे हुए कवि से कोई शतरंज की चाल चलने को कहता है। इन आठों कार्यों को कवि को सफलतापूर्वक कुछ निश्चित समय में पूरा करना पड़ता है। इसलिए यह अष्टावधान कहलाता है। शतावधान में कवि को एक साथ सौ पृच्छकों को सौ पद्य कहने पड़ते हैं। सौ पृच्छक, सौ विषयों पर पद्य कहने को कहते हैं, और शतावधानी कवि सब पृच्छकों को उनके इच्छित छंदों में इच्छित विषयों पर एक-एक या दो-दो चरण सुनाता है और फिर प्रथम पृच्छक से लेकर सबको उनके शेषांश सुनाता है। अंत में सौओं पद्यों को क्रम से सुनाता है। यह शतावधान है जो दो-चार दिन तक चलता है। शतावधान की अपेक्षा अष्टावधान कठिन समझा जाता है। इनके अतिरिक्त एक सहस्रावधान भी है जिसमें एक हज़ार पृच्छकों को हज़ार पद्य सुनाने पड़ते हैं। इस प्रकार की कविता में यद्यपि भावों की गहरायी और कला की कुशलता कम दिखायी पड़ती है, तथापि इससे कवि के पांडित्य-प्रकर्ष, अनेक विषयों का ज्ञान, भाषा पर असाधारण अधिकार, प्रवाहमयी आशु कवित्व-रचना-शक्ति, धारणा आदि का परिचय मिलता है।

भाव-कविता विषयी प्रधान अथवा आत्माश्रयी होती है और उसमें कवि की अनुभूति प्रधान होती है। प्रकृति को कवि अपने भावों की छाया में देखता है और उसपर उनका रंग चढ़ाकर उसे ऐसा रूप प्रदान करता है कि वह वस्तु मात्र न रहकर कवि के भावात्मक सौन्दर्य की वाहिका बन जाती है। भावात्मक होने के कारण कवि की सौन्दर्यानुभूति अतींद्रिय होती है। यही भाव-कविता का प्राण है। अपनी इस अतींद्रिय सौंदर्यानुभूति को वह यथा साध्य तत् सदृश प्राकृतिक उपादानों के द्वारा अभिव्यक्त करता है जिससे शैली में एक ऐसी विशिष्टता आ जाती है कि एक सजीव भावात्मक चित्र हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। इसी प्रक्रिया में बिंबविधान आ जाता है जिसपर भावों की प्रेषणीयता की सफलता निर्भर करती है। कभी-

कभी प्रकृति आलंबन बनकर कवि की सौंदर्यानुभूति को जगाती है और एक ऐसे भाव जगत की सृष्टि करती है, जो कल्पना प्रसूत होते हुए भी अनुभूति प्रधान होने के कारण सत्य ही होता है। सौंदर्यानुभूति की अभिव्यक्ति की इन दोनों दशाओं में कल्पना का बहुत बड़ा हाथ रहता है जिससे इसको तॅलुगु में 'काल्पनिकोद्‌यममु' (कविता में काल्पनिक आंदोलन) कहा गया है।

इस प्रकार काल्पनिक आंदोलन में चली भाव-कविता की धारा के, जिसका विकास "साहिती समिति" के द्‌वारा खूब हुआ, कई रूप मिलते हैं जिनका नामकरण डॉ० दिवाकर्ल वेंकटावधानी ने इस प्रकार किया; लघु काव्य, खण्ड काव्य, आत्माश्रयी कविता, प्रकृति-कविता और मर्म कविता। इनमें मर्म कविता को रहस्यवादी कविता के रूप में समझा जा सकता है जिसमें माधुर्य भावना का समावेश है। श्री वेंकटपार्वतीश्वर कविद्‌वय की रचना 'एकांत सेवा' इस प्रकार की काव्यधारा की प्रथम रचना मानी जा सकती है। अतः वे भाव-कविता के वैतालिक माने जा सकते हैं। यह काव्य धारा आगे चलकर सर्वश्री विश्वनाथ, रायप्रोलु, देवुलपल्लि, बसवराजु, नंडूरि, अडिवि, वेदुल, प्रभृति कवियों की रचनाओं के द्‌वारा बहुत विकसित हुई, जिसमें देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत गीतों की रचना भी मिलती है। छंद विधान की दृष्टि से इस धारा की कविताओं में स्वच्छंद छंदों और ताल प्रधान गीतों का अच्छा प्रयोग हुआ जिसका प्रारंभ श्री गुरजाड अप्पाराव ने अपने "मुत्याल सरालु" के साथ किया था, यद्‌यपि कहीं-कहीं शास्त्रनिबद्‌ध छंद भी मिलते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भाव-कविता का जो संग्रह है उसमें आंध्र प्रदेश के सामाजिक आचार-विचारों और ऐतिहासिक औन्नत्य के साथ-साथ समग्र भारत की सांस्कृतिक एकता के प्रति कवियों की जागरूकता भी प्रतिबिंबित है।

इस संग्रह का संकलन उस्मानिया विश्वविद्‌यालय, हैदराबाद के तॅलुगु विभाग के रीडर और प्रसिद्‌ध आधुनिक तॅलुगु कवि डॉ० सी.

नारायण रॅड्डि के परामर्श से किया गया है। अनुवाद के प्रबंध और संपादन का भार इन पंक्तियों के लेखक को सौंपा गया है। जिन जिन कवि मित्रों ने समय पर कविताओं का अनुवाद भेजकर मुझे सहयोग प्रदान किया उनको मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। अनुवाद के संबंध में एक बात कहना चाहता हूँ। यह तो सभी विद्वान पाठक जानते हैं कि कविता का अनुवाद मौलिक रचना की अपेक्षा बहुत कठिन होता है क्योंकि अनुवादक को मूल कवि के हृदय को पहचानकर उसकी अनुभूति के साथ तादात्म्य पाकर उसे अनुवाद की भाषा में स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त करना होता है। प्रस्तुत संकलन के अनुवादकों ने मूल कवि के आशय को समझकर उसे हिन्दी में यथासाध्य स्वाभाविक रूप से रूपांतरित किया है। किन्तु फिर भी कहीं-कहीं उत्तर भारत के पाठकों को शब्द चयन, छंदविधान, शैली आदि में कुछ विलक्षणता लक्षित हो सकती है जो अनिवार्य है। हिन्दी के राष्ट्रीय स्वरूप को दृष्टि में रखकर यदि देखा जाय तो यह अनिवार्य ही नहीं, बल्कि आवश्यक भी है क्योंकि तभी सच्चे अर्थों में वह समूचे राष्ट्र की संपत्ति हो सकती है और देश के भिन्न-भिन्न भाषा क्षेत्रों के भावों और विचारधारा को अभिव्यक्त कर उसके द्वारा उनमें निहित सांस्कृतिक एकता को प्रतिबिंबित करने में समर्थ होती है। इसके द्वारा हिन्दी का शब्द समूह विशाल होता है और उसकी अभिव्यंजना शक्ति भी विकसित होती है। इस प्रकार विभिन्न भाषा प्रांतों के लेखक हिन्दी के विकास में योगदान देते हैं जो हिन्दी के राष्ट्रीय स्वरूप के विकास की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

मूल तॅलुगु कविता के लिप्यंतरण के संबंध में एक बात ध्यान देने की है। तॅलुगु में ह्रस्व एकार और ओकार भी प्रयुक्त होते हैं जिनको इस ग्रंथ में इस प्रकार मुद्रित किया गया है; तॅ (ह्रस्व ते) तॉ (ह्रस्व तो)। पढ़ते समय पाठक इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखें। उच्चारण की दृष्टि से तॅलुगु स्वरांत भाषा है। शब्दों के बीच में आनेवाले सब व्यंजन भी संपूर्ण रूप से उच्चरित होते हैं। अतः किसी

अक्षर में हल का चिह्न मिलने पर ही उसे व्यंजनवत् पढ़ना चाहिए। अन्यथा स्वरांत ही पढ़ना चाहिए।

इस पुस्तक को आद्यंत सुनकर उचित परामर्श देकर सुहृद मित्रवर श्री ए. सी. कामाक्षिराव ने मेरी जो अमूल्य सहायता की उसके लिए मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ।

आंध्र प्रदेश साहित्य अकादमी ने इस संग्रह के संपादन का भार मुझे सौंपकर इस दिशा में राष्ट्र भारती की कुछ सेवा करने का सुअवसर जो प्रदान किया उसके लिए मैं अकादमी के अधिकारियों का कृतज्ञ हूँ। यथासंभव इस कार्य को निर्दुष्ट रूप से संपन्न करने का मैंने प्रयत्न किया है। किन्तु गुण-दोषों के निर्णय का भार मेरा नहीं है; विद्वान पाठक-बंधुओं का है। यदि यह संग्रह आँध्रेतर भाषियों की, तॅलुगु के आधुनिक काव्य साहित्य संबंधी जिज्ञासा को जगा सका और देश भर में व्याप्त भारतीय संस्कृति की एक झलक प्रस्तुत कर सका तो यह प्रयत्न सफल कहा जा सकता है।

हिन्दी प्रचार प्रेस के कार्यकर्ता भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने सुंदर ढंग से इसे मुद्रित किया है।

विनीत

चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

काव्यानुक्रमणिका

कृतज्ञता-ज्ञापन

तॅलुगु के उन सभी कवि-महानुभावों को, जिनकी उदार अनुमति के बिना भावात्मक एकता की पहचान के राष्ट्रीय महायज्ञ में यह समिधा नहीं जुड़ सकती थी, हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करने में आनंद का अनुभव करते हैं।

—प्रकाशक

आधुनिक तॅलुगु कविता

प्रथम भाग

मनिषि

मूल : श्री गुरजाड़ अप्पाराव

मनिषि चेसिन रायि रप्पकि
महिम कलदनि सागि मॉक्कुतु
मनुषुलंटे रायि रप्पल
कन्न कनिष्टम्

गानु चूस्तावेल ? बेला !
देवु डॅकडो दागॅनंट्ट
कॉण्डकोनलु वॅतुकुलाडे
वेला ?

कन्नु तॅरिचिन कानबड़डो
मनिषि मातुडि यंदु लेडो ?
यॅरिगि कोरिन करिगि ईडो
मुक्ति ?

मनुज

अनु: श्री एम. रंगय्या

मनुज के निर्मित पत्थरों में
देखता जगत महिमा अपार ।
करता नमन साष्टांग नतसिर
शिला से मान मनुज निस्सार ।

मनुज का तू अपमान करता
सोच है कहीं छिपा भगवान ।
गिरि वनों में ढूँढ़ता है क्यों ?
भटकते रहा घूम नादान !

आँख खोलो तो दिखेगा क्या
उस मनुज में ही माधव नहीं ?
माँगे यदि पहचान कर उसे
तो क्या वह मुक्ति देगा नहीं ?

देशभक्ति

मूल: श्री गुरजाड़ अप्पाराव

1. देशमुनु प्रेमिंचुमन्ना
मंचि यन्नदि पॅन्चुमन्ना
वॉट्टि माटलु कट्टि पॅट्टोय
गट्टि मेल् तलपॅट्टवोय ।

2. पाडि पंटलु पॉङ्गि पॉर्ले
दारिलो नुवु पाटु पडवोय
तिंडि कलिगिते कंडकलदोय
कंडकलवाडेनु मनिषोय ।

3. ईसुरोमनि मनुषुलुंटे
देशमेगति बागुपडुनोय
जल्दुकॉनि कळलॅल्लनेर्चुकु
देशि सरुकुलु निंचवोय ।

4. अन्नि देशाल् क्रम्मवलॅनोय
देशि सरूकुल नम्मवलॅनोय
डब्बु तेलेनट्टि नरुलकु
कीर्ति संपद्लब्बवोय

5. वॅनक चूचिन कार्यमेमोय
मंचि गतमुन कॉंचमेनोय
मंदगिंचक मुंदु अडुगेय
वॅनुक पडिते वॅनकॅनोय ॥

देशभक्ति

अनु : श्री तुम्मूरि रामकृष्ण मूर्ति

1. है प्रेम करना देश को ।
बढ़ा देना भलाई को ।
मत बोलना व्यर्थ बातें ।
करो चेष्टा श्रेष्ठ हित की ।।

2. बढ़ेगा धनधान्य जैसे
श्रम उठाना तुम्हें वैसे ।
अन्न हो तो बल पुष्टि है ।
वही मनुज जो पुष्ट है ।।

3. मनुज दुर्बल अगर होते
तो सुधरता देश कैसे ?
सीखकर सब कलाओं को
भरो देशी वस्तुओं को ।।

4. देश सारे घेर लेना ।
माल देशी है बेचना ।
धन कमा जो सकते नहीं
कीर्ति धन वे पाते नहीं ।

5. मुड़ देखना किस काम का ?
लाभ गत में है अल्प ही ।
छोड़ सुस्ती पग बढ़ाना ।
पिछड़ते तो पिछड़े रहो ही ।।

6. पूनु स्पर्धनु विदूयलंदे
वैरमुलु वाणिज्यमंदे
व्यर्थ कलहं पॅञ्चबोकोय
कत्ति वैरम् काल्चवोय ॥

7. देशाभिमानं नाकु कद्दनि
वट्टि गॉप्पलु चॅप्पुकोकोय
पूनि येदैनानु वॉक मेल
कूर्चि जनुलकु चूपवोय ॥

8. ओर्वलेमि पिशाचि देशम्
मूलुगुलु पील्चेसॅनोय
ऑरुल मेलुकु संतसिस्तू
ऐकमत्यं नेर्चवोय ॥

9. परुल कलिमिकि पॉर्लि येड्चे
पापि कॅक्कड सुखं कद्दोय ?
ऑकरि मेलुतनमेलनॅञ्चे
नेर्परिकि मेलु कॉल्ललोय ॥

10. स्वंतलाभम् कॉन्तमानुकु
पॉरुगु वाडिकि तोडुपडवोय
देशमंटे मट्टिकादोय
देशमंटे मनुषुलोय ॥

11. चेट्ट पट्टाल पट्टुकॉने
देशस्थुलंता नडववलॅनोय

6. कलाओं में ही होड़ करना ।
व्यापार में ही वैर करना ।
व्यर्थ झगड़ा मत बढ़ाओ ।
वैर कृपाण का त्याग दो ॥

7. डींग ऐसी मत हाँकना
कि है मुझमें देश-ममता ।
यत्न करके भलाई को
कर दिखाना सब जनों को ॥

8. डाह-पिशाच बढ़ चढ़ा है ।
चूस डाली देश-मज्जा ।
अन्य-हित पर हर्ष करना ।
एकता तुम सीख लेना ॥

9. देख परधन दुःख जिसको
सुख कहाँ उस पाप रत को ?
अन्य-हित ही हित मानते
तो हित कई प्राप्त होते ॥

10. छोड़कर कुछ निज लाभ को
मदद देना पड़ोसी को ।
देश माने मिट्टी नहीं
देश माने है मनुज ही ॥

11. सब डाल गलबहियाँ मिलें ।
देशवासी पग बढ़ा दें ।

अन्न दम्मुल वॅलॅनु जातुलु
मतमुलन्नी मॅलग वॅलॅनोय ॥

12. मतम् वेरैतेनु एमोय
मनसुलॉकटै मनुषुलुंटे
जात मन्नदि लेचि पॅरिगी
लोकमुन राणिंचुनोय ॥

13. देशमनियॅडि दॉड्ड वृक्षम्
प्रेमलनु पूलॅत्तवलॅनोय
नरुल चॅमटनु तडिसि मूलम्
धनम् पंटलु पंडवलॅनोय ॥

14. आकुलंदुन अणगि मणगी
कवित कोकिल पलकवलॅनोय
पलुकुलनु विनि देशमंदभि-
मानमुलु मॉलकॅत्तवलॅनोय ॥

सब धर्म और सब जातियाँ
भ्रातृत्व से बरता करें ॥

12. धर्म चाहे भिन्न होवें,
एक मन के मनुज होवें ।
जन्म तब तो चढ़ बढ़ेगा ।
संसार में फब उठेगा ।

13. विशाल तरु देश रूपी
सुमन फूले प्रेम रूपी ।
नर-स्वेद से मूल भीगे ।
धन-फसल की उपज होवे ॥

14. दबे दुबके पत्तों तले
काव्य-कोकिल कुहुक बोले ॥
कुहुक सुनकर देश-उर में
प्रेम अंकुर फूट निकलें ॥

मुसलम्म-मरणमु

यह खण्डकाव्य स्व. डॉ. कट्टमंचि रामलिंगा रेड्डी की अनुपम कृति है जो स्त्रियों में त्याग और वीरता की भावना जगाने के लिए लिखी गयी थी। इसके कथानक का परंपरागत आधार भी मिलता है जो "अनंतपुर चरित्र" नामक ग्रंथ से ग्रहण किया गया है। आंध्र प्रदेश के वर्तमान अनंतपुर के समीप बुक्करायसमुद्र एक छोटा गाँव है जिसके तालाब के तट को "मुसलम्मा का तट" कहा जाता है जहाँ अब भी "मुसलम्मा" जो इस काव्य का प्रधान पात्र है, ग्राम-देवी के रूप में लोगों से आराधित होती है।

बुक्करायसमुद्र के पास जो झील है उसमें कभी अतिवृष्टि के कारण बहुत बड़ी बाढ़ आयी तो उससे सारे गाँव को बचाने के लिए, अशरीर वाणी के आदेशानुसार, उस गाँव की निवासिनी "मुसलम्मा" ने बड़ी वीरता पूर्वक जो आत्म त्याग किया था, वह इसकी वस्तु है। ग्राम के रक्षणार्थ बाढ़ से भरी उस झील में डूबकर आत्म बलि के लिए उद्यत "मुसलम्मा" के सास और ससुर से बिदा लेते समय उनको धीरज बँधाने का प्रसंग यहाँ दिया गया है।

"मुसलम्म-मरणमु" से

मूल: स्व. कट्टमंचि रामलिंगा रेड्डी

1. कॉड्डुकुलॅल्लरु रामुलु, पुडमितनय
   लॅल्ल कोडंड्रु, तक्कुव एमि मीकु ?
   रॅप्पलक्षुल बोलॅ मिम्मॅप्पगिदिनि
   नहरहम्मुनु सेविंतुरडलनेल ?

2. तल्लियु तंड्रियुं गुरुवु दैवमु लॅल्लरु मीर; मीरले
   चॅल्लगनिय्यरेनि यिक चॅल्लुनॅ नादगु पून्कि यॅच्चटन् ?
   गल्लयॉ सत्यमो एरुग; कर्मविपाकत नेपुँ वेळ मे
   नॅल्ल परोपकारमुनके यनि पल्कितिरट्लु चेसॅदन् ॥

3. अन विनि माम यिट्लनु नम्म ! निनु दूर
   नॅन्चिन वाडगा नेनु विनुमु
   नीवॅरुंगनिदेदि नेनॅरुंगुदुनम्म
   नीयिच्च वच्चिनट्लॅ यॉनर्पु
   मनुचु दुःखम्मुन नाननम्मुनु वांचि
   यॉण्डु वलनु चूचुचुंडॅ नंत
   नत्तगारडलुचु नल्लन मुद्दिदड्डि
   पोयिरम्मनि पल्क पुव्वुबोणि

हृदयमुन नग्गलंबगु प्रीति मॅरय
तनदु चिन्नारि पॉन्नारि तनयु देर
बनिचि कन्नुल नॉक्क कोत्त प्रभ सॅलंग
जंक निडिकॉनि मुद्दाडि जालि दोप ॥

"मुसलम्मा की मृत्यु" से

अनु: डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

मुसलम्मा के, सास-ससुर से, बिदा लेने का प्रसंग

1. "तव पुत्र सभी राम समान सुशोभित।
भूतनया सम पुत्र वधू सब राजित,
पलकों से नेत्र ज्यों सभी से रक्षित
तुम्हें कोई न कमी, व्यर्थ क्यों दुःखित?

2. माता, पिता, गुरु, देव मेरे सभी तो आप ही हैं।
कैसे प्रतिज्ञा मम निभे यदि निरोधक आप ही हैं?
जाने झूठ हो या सत्य, पर आपही ने सिखाया।
हो जीवन परहितार्थ, इसको लक्ष्य मैंने बनाया" ॥

3. ससुर ने कहा, "बेटी! करता मार्ग निरोध न मैं तव
जो तुमको ज्ञात नहीं वह क्या बात बताऊँ अभिनव?
स्वयं विवेकवती तुम करना अपना कार्य अभीप्सित।"
यह कह उसने मुँह फेर लिया, नेत्र हुए जल प्लावित ॥

4. माथा सूँघ सास बोली, "बेटी! जाओ", सकरुण।
प्रणाम कर उनके चरणों में, उसने भी हो सकरुण
ले निज तनय अंक चूम लिया, नव नयनाभा भरकर।
फिर बोली, "चिरजीवी हो सुत! साथ पिता के रहकर ॥

4. అన్న పోర నీకు నమ్మ ఎఁక్కడిదిక ?
తండ్రిగారి గూడి తనరు మధ్య
నన్ను దలచి తలచి నాయనా ! యడలంగ
వలదు పోయి వత్తు పంపు తండ్రి !

5. అనుచున్ బిడ్డని కౌగిలించి తమి మూర్ధాఘ్రాణమున్ జేసి యాఁ
ఘ్యన భద్రంబని ప్రాణనాథునికి దానర్పించి యర్పించుచో
దనకుం బట్టక వచ్చు బాష్పముల నాతండెడ లక్షించి యే
ఇచునాఁ యంచానన మాఁణ్డుదిక్కునకు నా శోభాంగి త్రిప్పెన్వడిన్ ॥

5. "बेटा ! याद मुझे कर रोना
न कभी, तेरी माता
न रहेगी आगे, भेज मुझे"
कहकर सूँघा माथा ।
पुत्र सौंपकर पति के हाथों,
विह्वल हो सजल नयन ।
कि न देख दुखी हों पति उसने
निज फेर लिया आनन ॥

"एकांत सेवा" से

मूल : श्री वेंकट पार्वतीश्वर कवुलु

1. अलसिवच्चितिवेमॉ यनि जालिनॉन्दि
   चलुव पन्नीटि चे चरणमुल् गडिगि
   यलरु दुव्वलुवचे नड्डुगुल नॉत्ति
   यरविरि गद्दॅपै नासीनु जेसि
   फलरसंबुल तोड पानीय मॉसगि
   चक्कनिर्नम्मेन चंदनंबलदि
   तनिवार कर्पूर तांबूलमिच्चि
   श्रमवाय जेयगा सरसनु जेरि
   विरजाजि सुरटील विसरुचुनुंड
   नामेनु मरपिंचि नाकनु गप्पि
   इंद्रजालमु चेसि येगुट नीकु
   न्यायमै तोचॅने ना जीवितेश!

2. विरिदंड मॅडलोन वेयुटे कानि
   कन्नार नी मूर्ति गांचने लेदु
   प्रणमिल्लि यड्डुगुल बड्डुटये कानि
   चेतुलारग सेव चेयनेलेदु
   निनुगांचि मुग्धनै निलुचुटे कानि
   प्रेमदीरग बल्करिंपनेलेदु
   एमेमॉ मनसुलो नॅन्चुटे कानि
   तिन्नगा नाकोर्कि तॅलुपनेलेदु
   बोधंबुलो सुप्ति पोडसूपबोलु
   कनुललो जूपुलो गाविरुल् ग्रम्मॅ

"एकांत सेवा" से

अनु: श्री बालशौरि रेड्डी

1. देख थके आये होगे दया कर सुगंधित
   शीतल जल चरण प्रक्षालन करके ।
   सुंदर पीतांबर से पोंछ चरण, कुसुम-
   सिंहासन पर सुख से आसीन करके ।
   मधुर फलों के रस का पानीय पिलाकर
   सुंदर तन पर चंदनलेप करके ।
   कर्पूर सुगंधित तांबूल से तृप्त करके
   श्रम दूर करने पास पहुँच करके ।
   जुही-पंखे से वायु सेवन
   कराती जब, कर बेसुध मुझे
   आँख बचा, इंद्रजाल करके
   जाना प्रभु ! लगता न्याय तुझे ?

2. तुम्हारे कंठ में पुष्पों की माला तो पहनायी
   लेकिन आँखों भर तेरी मूर्ति देखी नहीं ।
   तव चरणों में गिरकर प्रणाम तो किया
   पर हाथों से तेरी सेवा कुछ भी की नहीं
   तुझे देखकर मुग्धा बनकर खड़ी रही
   परंतु प्रेम से बोली तक कुछ भी नहीं ।
   अपने मन में क्या क्या सोचती ही रह गयी
   सीधे अपनी कामना प्रकट तो की नहीं ।

जागृति में सुप्ति दीखती सी
दृष्टि में कालिमा छाती सी

वॅलुगुलो जीकटि विरिसॅ गाबोलु
मनसुलो दॅलिविलो मरपुलु दोचॅ
आनंदमंदुटे यपचारमनुचु
अवशनै युंडुटे अपराधमनुचु
मदिनॅञ्चि यीरीति मायलु सेय
भाव्यमै तोचॅने प्राणेश! नीकु ॥

3. कल्याण विभु सेव गाविंचुवेळ
येमि चेयग बोयि येमि चेसितिनॉ?
प्राणनाथुनितो भाषिंचुवेळ
नेमि चॅप्पग बोयि येमि चेप्पितिनॉ?
विश्व मोहन मूर्ति विनुतिंचु वेळ
नेमि पाडग बोयि येमि पाडितिनॉ?....
कट्टिन पूदंड कट्टिनट्लुंड
पट्टिन हारति पट्टिनट्लुंड
वॅडलि पोयिनयट्टि विज्ञान मूर्ति
मदि येमियॅञ्चॅनो मरलि राडायॅ ॥

4. आवेळ मॉदलुगा ननुनिमुषंबु
नेरीतिनुंटिनो यॅरुगवटम्म
अवशनै चेसिन यपचारमुनकु
गुण निधानुंडिट्लु कोपिंपदगुनॅ....
साक्षात्करिंचिन स्वामिनि गांचि
निलुवॅल्ल बुलकिंप निलुचुट कंटॅ
कल्याण निलयमौ कांतुनि मूर्ति
निलुवु टद्दंबुलो निलुपुट कंटॅ
अदरि पाटुन दोचु नात्मेशु जूचि, वॅरि नै वॅनुकंजॅ वेयुट कंटॅ
प्रेम गीताललो ब्रियुनि पेरॅत्ति, गद्गद स्वरमुनु गांचुट कंटॅ

किरण में अंधेरा खिलता सा
मन तो विस्मृति में खोता सा ।
आनंदित होना ग़लत समझ
अवशा रहना अपराध समझ
यों माया में फँसाना मुझे
प्राणेश ! लगा क्या ठीक तुझे ?

3. प्रभु सेवा में कुछ का कुछ क्या
काम किया हो मैंने
पति से बातों में कुछ की कुछ
बात कही हो मैंने
विश्व-विमोहन-स्तुति में कुछ का
कुछ गाया हो मैंने....

माला तो जैसी की तैसी
रही तो आरती भी वैसी....
विज्ञान मूर्ति तो चले गये ।
क्या सोचा हो, लौट न आये ॥

4. उस दिन से कैसे रहती पल पल नहीं जानती क्या ?
अवशा के अपराध पर गुणधाम का क्रोध उचित क्या ?
प्रत्यक्ष हुए प्रभु लखकर पुलकित होने से बढ़कर
कल्याण-धाम कांत की मूर्ति हृदय-मुकुर में रखकर
चौंक देख प्रभु मुझ पगली के पीछे हटने से बढ़
प्रेम गीतों में प्रिय-नाम लेकर गद्गद होने से बढ़

दासि चेसिन यट्टि तप्पेमि कलदॉ
आनतिम्मनि स्वामि नड्डुगुदु गानि
वनंबु लोपलि पुष्परथमु
तुम्मेदा! वेवेग तोलितेवम्म!

5. प्रणय सौधंबुलो बतियुंड्डुवेळ
प्रेमतो मनसिच्चिच पिलिचॅड्डु वेळ
आनंद मूर्ति यै याडॅडि वेळ
चित्तमा! चित्तमा! चॅद्रबोकम्म!
प्रेमालयंबुलो ब्रियुडाड्डुवेळ
प्रेम डोलिकललो ब्रियुड्डूगु वेळ
आनंद साम्राज्य मंदॅडिवेळ
चित्तमा! चितत्मा! चॅद्रबोकम्म!

6. ईमॉग्ग विरियिंचि इन्नाळ्ळदाक
दंड गूर्चुट किंत तडयुट येल?
ई पंड्डु पंडिंचि यिन्नाळ्ळदाक
आरगिंचुट किंत यालस्य मेल?
एमैन नॅट्टुलैन निष्पटिकैन
निखिलेश! नी कृपान्वित कटाक्षमुन....
करुणावनमुलोनि कल्याण वीचि....
कन्नुलु चल्लगा गनुगॉन गंटि
हृदयेश! ना भाग्यमे भाग्यमय्य।

दासी का अपराध हुआ क्या ?
पूछूँ, प्रभु की हो आज्ञा क्या ?
कुसुम-रथ प्रणय वन का भौंरे !
बहुत शीघ्र हाँक लाओ रे !

5. प्रणय सौध में पति रहते जब
मन से, प्रेम से बुलाते जब
आनंद मूर्ति खेल रहे जब
मन मेरे ! मत घबराना तब ॥

प्रेमालय में प्रिय खेलें जब
प्रेम-झूले प्रिय झूलते जब....
आनंद सामाज्य मिलता जब
मन मेरे ! मत घबराना तब ॥

6. यह कली खिला, हार बनाने
में इतनी देरी क्यों ?
यह फल पकाकर, ग्रहण करने
में इतना विलंब क्यों ?
कुछ भी कैसे भी हो प्रभु !
अब तेरी कृपा-दृष्टि में
मैंने देखी कल्याण वीचि,
तेरे करुणावन में ।

आँखें शीतल, हृदयेश ! भाग्य
मेरा है सच्चा महा भाग्य ।

सर्वलोकेश ! यी सालभंजिकनु
नी केळि गृहमंदु निलुव गानिम्मु
भुवन संत्राण ! यी पुष्पवल्लिकनु
नी पूल तोटलो निलुवगानिम्मु
कल्याण धाम ! यी कनक पीठिकनु
नी पादमुल पॉन्त निलुवगा निम्मु....
दयतोड दिलकिंचि दास्यंबॉसंगि
नन्नेलुकॉनुमय्य ना जीवितेश !

7. प्रभु ! यह साल-भंजिका रहने दो निज क्रीड़ा गृह में
विभु ! यह पुष्पवल्लिका रहने दो निज पुष्पवनों में
नाथ ! यह कनक-पाद-पीठ दो रहने निज चरणों में
पालन कर जीवन-प्रभु ! दासी का, करुणा भर दृग में ॥

जन्म भूमि

मूल : श्री रायप्रोलु वेंकट सुब्बाराव

ए देश मेगिना एंदु कालिडिन
ए पीठ मॅक्किना एवरॅदुरैन
पोगडरा नी तल्लि भूमि भारतिनि,
निलुपरा नी जाति निंडु गर्वम्मु ।
लेदुरा इटुवंटि भूदेवि एंदु
लेरुरा मनवंटि धीरु लिंकॅन्दु

ए पूर्व पुण्यमो, ए योग बलमॉ
जनियिंचिनाडवी स्वर्ग लोकमुन
ए मंचि पूवुलन् प्रेमिंचिनावॉ
निनु मोचॅ नी तल्लि कनक गर्भमुन ॥
लेदुरा इटुवंटि भूदेवि ऍन्दु
लेरुरा मनवंटि धीरु लिंकॅन्दु

सूर्युनि वॅलुतुरु सोकुनंदाक
ओडल जॅन्डालु आडुनंदाक
नरुडु प्राणालतो नडुचुनंदाक
अंदाक गल यीयनंत भूतलिनि
मन भूमिवंटि कम्मनि भूमि लेदु ।

तम तपस्सुलु ऋषुल् धारपोयंग
चंड वीर्यमु शूर चंद्रुलर्पिंप
राग दुग्धमु भक्त राजु लीयंग
भाव सूलमु कवि बाँधवुलल्ल ।

जन्म भूमि

अनु: डॉ० आदेश्वर राव

चाहे जिस देश में भी क्यों न जाओ
जिस प्रान्त औ' जिस पीठ पर भी
क्यों न तुम निज पैर रक्खो,
और कोई सामने से क्यों न गुजरें,
तुम करो गुण-गान अपनी मातृभूमि भारत का
औ' करो रक्षा अपने जाति-गौरव की।

किस पूर्व पुण्य से, किस योग-बल से
जन्म तुमने लिया इस स्वर्ग-भुवि पर
जाने किन पुण्य पुष्पों से तुम ने स्नेह जोड़ा
कि तुम्हें कनक-गर्भ में माता ने पाया।
ऐसी भूदेवि तो कहीं नहीं रे!
हम जैसे धीर नहीं कहीं रे!

बढ़ेंगी जहाँ तक सूर्य की रश्मियाँ
नाचेंगी जहाँ तक नावों की झंडियाँ
वहाँ तक जो पृथ्वी फैली हुई है
उस में भारत-सी प्यारी भूमि नहीं है।

ऋषियों के पावन तप-धन से
धरणीशों के शौर्य-हार से
भक्त-रत्न-शुचि-राग-दुग्ध से
कवि-प्रभुओं के भाव-सूत्र से

दिक्कुल कॅग दन्नु तेजंबु वॅलुग
जगमुलन्नुगिंचु मगतनंबॅगय
रालु पूवुलु सेयु रागालु साग
सौंदर्य मॅग बोयु साहित्य मॉप्प
वेलिगिन्दीदिव्य विश्वंबु पुत्त !
दीपिंचॅ नी पुण्य देशंबु पुत्त ।
अवमान मेलरा अनुमान मेल
भरत पुत्तुड नंचु भक्तितो पलुक ॥

दिगन्त व्यापी प्रभा-दीप्ति से
पत्थर को पुष्प बना
सकनेवाले अमर गान से
अग-जग कम्पित करनेवाले
वीरों के पौरुष, प्रताप से
सौन्दर्यमयी साहित्य-विभव से
हे पुत्र ! तुम्हारा दिव्य विश्व चिर शोभित !
हे पुत्र ! तुम्हारा पुण्य देश नित दीपित ! !
"मैं भारत पुत्र हूँ" भक्ति युक्त कहने में
मानो क्यों अपमान ? क्यों शंका मन में ?

विरह वीथी

मूल : श्री रायप्रोलु वेंकट सुब्बाराव

हेम पालल चंदन मॅण्डिपोयॅ
द्वारमुलु मोयुचुन्नवि हारमुलनु
सानलंदिंकॅ स्नान कषाय गंध
मबल, ऍवनि कोसमु सगमयि कृशिंतु ॥

चॅक्कु चॅदरनि पापट चिक्कुवडियॅ
वेणिबंधमु शिथिलमै पिरुदुलंदॅ
करगि चॅरगिन तिलकरेखलनु तुडुव
वतिव, यॅवडाहरिंचॅ नी यार्द्र हृदिनि ॥

पालु पॉङ्गिन गति पॉङ्गु प्रणय रक्ति
नापुकॉनलेनि पडुचु प्रायंबु तोड
नम्मि, यॅवनिकि नी मन मम्मि कॉण्टि
वुविद, यी मेघ मास नवोदयमुल ॥

विरह वीथी

अनु: डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

हेम पात्र का सूख गया है चंदन ।
करते हैं अब द्वार हार-भार वहन ।
सूखा चकलों में स्नान सुगंधित चंदन ।
अबला! किसके हित हो जाती कृश तन ?

माँग पड़ी है उलझी तेरी सुंदर ।
छूटी वेणी लटक रही नितंब पर ।
गलित तिलक रेखाएँ पोंछ न लीं ।
तव आर्द्र हृदय आशा किसने हर ली ?

प्रणय राग जिस यौवन में जगता है
दूध समान व उद्दाम उफ़नता है ।
उसमें किस निर्मम पर विश्वास किया ?
पावस में अपना मन यों बेच लिया ?

प्रबोधमु

मूल : श्री रायप्रोलु वेंकट सुब्बाराव

अमरावती पट्टणमुन बौद्धुलु विश्व
विद्यालयमुलु स्थापिंचुनाडु
ओरुगल्लुन राजवीर लांछनमुग
वलु शस्त्र शाललु निलुपुनाडु
विद्यानगर राजवीथुल कवितकु
पॅण्डिल पंदिळ्ळु कप्पिचुनाडु
पॉट्नूरिकि समीपमुन नाँध्र साम्राज्य
दिग्जय स्तंभ मॅत्तिंचुनाडु
आंध्र संतति के महिताभिमान
दिव्य दीक्षा सुख स्फूर्ति तीवरिंचॅ
ना महावेश मर्थिंचि यांध्रुलार
चल्लुडांध्रलोकमुन नक्षतलु नेडु ॥

तन गीति यरवजातिनि पाटकुलनुगा
दिद्दि वर्धिल्लिन तॅनुगुवाणि
तन पोट्टुलु विरोधि तंडंबुलकु सहिं
पनिविगा मॅरसिन तॅनुगु कत्ति
तन यंदमुलु प्रांत जनुल कभिरुचि वा
सन नेर्प नलरिन तॅनुगुरेख
तन वेणिकलु वसुंधरनु सस्य श्याम
लनु जेय चॅलगिन तॅनुगु भूमि

प्रबोध

अनु: श्री रापर्ति सूर्यनारायण

अमरावती में बौद्ध विद्या पीठ की कर स्थापना
कर "ओरु गल्लु" में नृप चित शस्त्र-शाला स्थापना
विद्यानगर में आंध्र कवितोद्वाह-मंडप भी बना
पोट्नूरु समीप आंध्र दिग्जय स्तंभ की कर स्थापना
आंध्र संतति दीप्त थी जिस महिमाभिमानावेश से
औ दिव्य दीक्षा से तथा जिस स्फूर्ति विद्याभ्यास से
अब कामना कर आंध्र वर सुत! उस महित आवेश की।
अक्षत रखो तुम आंध्र भू के शीर्ष पर शुभ वेष की ॥

वह तॅनुगु गिरा जो तमिलों को गायक बना सोहती
वह तॅनुगु घन-असि चमककर जो रिपु-कंठ में सोहती
वह तॅनुगु रेखा सिखाती प्रांत-भर अभिरुचि-वासना
वे तॅनुगु नदियाँ शोभतीं जो सस्य भरिता भू बना
इस आर्द्र मानस-वीथियों में विचरती तो देख के
प्रति फलित करता स्मृति पटों में स्वाभिमानी लोक के
नहीं मर गया, नहिं मर गया, वह आंध्र उज्ज्वल चरित है
अब हृदय फाड़ उसे पढ़ो रे जो सदा रस भरित है ॥

अस्मयार्द्र मनो वीथि नावहिंप
ज्ञाप्ति कॅलयिंचु चुन्नाड, चावलेदु
चावलेदु आंध्रुल महोज्जवल चरित
हृदयमुलु चील्चि चदुवुडो सदयुलार ॥

कृष्णातरंग पंक्तिन् द्रॉक्कि लुळ्ळित
नांध्र नौकलु नाट्यमाडुनाडु
इंटिंट देशि साहित्य दीपमुलतो
नांध्र तेजस्सु रापापुनाडु
सुकुमार शिल्प वस्तु प्रपंचमुनंदु
नांध्र नैपुणि पंतमाडुनाडु
समर सेनाव्यूह जयपताकल क्रिंद
नांध्रपौरुषमु चॅण्डाडुनाडु

चूचि, संतोषमुन तलत्लूचि, गर्व
माचि, आंध्र पुत्री पुलुलंदगलरु
शांति, नंदाकलेदु विश्रांति मनकु
कंकण विसर्जनल किदि कालमगुनॅ ?

जब आंध्र नावें डोल कृष्णा वीचियों पर नाचतीं,
जब आंध्र तेजोराशि वाणी-दीप चूम विराजती,
जब रुचिर शिल्प कला-जगत में आंध्र-पटुता भ्राजती,
जब आंध्र शक्ति समरभूमि में जय गर्व से शोभती,
तब देख, हर्षित सिर हिलाकर आंध्र नर नारी यहाँ
सुख शांति पा सकते, तभी तक शांति मिल सकती कहाँ?
कंकण विसर्जन का नहीं यह समय आंध्रो! देख लो।
सुंदर भविष्य तव सर्वदा ही रहेगा, मान लो॥

अमलिन प्रेममु

मूल : श्री रायप्रोलु वेंकट सुब्बाराव

चॅलिया ! ऍन्नडॉ चेरदीसॅ मनलं जिन्नारि नेस्तंबु, मु
ग्धुलमै युंट नॅरुंगमैति मपुडे घोषन् रवंतैन, कं
दळित स्निग्ध रसोदयंबगुट चेतं बिप्पुडल्लाडिया
कुलु मेयुन् बलवद्वियोगमु लनुंगु प्रेमलं द्रॅम्पगन् ॥

तन गुण लतलु पूचिन शोभलोयन
चिरु नव्वु वॅन्नॅलचॅण्ड्लु विसर
तन मनोलील कांचिन राग मधुवन
पलुकु कॉम्मलु पूलपालु पिदुक
तन भाव बंध मंदिन विभ्रमंबन
चूपुलु वलपुट्टुच्चलनु पन्न
तन प्रेम भावनल् गनु नूत्न कळलन
नडलु प्रायंपु मन्ननलु सूप

कनुल नरवालिच पातिताक्षमुलतोड
गांचियुनु गांचलेनि कीगंटि कॉसलु
पॅडल वालिकल् राल निल्चॅड्डु त्वदीय
मौग्ध्य मॅडबाय लेदु ना मदि लतांगि !

निर्मल प्रेम

अनु: श्री रापर्ति सूर्यनारायण

(श्री रायप्रोलु वेंकट सुब्बाराव के "तृणकंकण" नामक लधु काव्य से यह प्रसंग दिया गया है जिसमें प्रेमी और प्रेमिका के वासनातीत निर्मल प्रेम का वर्णन किया गया है। प्रेमी और प्रेमिका की बचपन की मित्रता अंत में प्रणय के रूप में परिणत होती है, जो दैवयोग से विफल होता है। किंतु प्रेमिका संयमशाला बनकर अपने प्रेम को उसी पुरानी मित्रता के रूप में परिवर्तित कर लेती है और प्रेमी से भी तदनुरूप मानने का अनुरोध करता है। उससे प्रेरित होकर प्रेमी उसके हाथ में तृण का कंकण बाँधता है।)

प्रेमी :—बाल्य नेह ने हमें मिलाया। मुग्ध हुए हम, छायी माया।
नहीं जानते थे तब कुछ भी। क्या था हृदयों का घोष सभी।
हुआ रसोदय स्निग्ध कंदलित। प्रेम पाश अब वियोग विदलित।
निरुत्साह होकर अब मानस। तृण खाता है सखि! जड़तावश॥

मंदहास ने फेंके शीतल। शुभ्र चंद्रिका गुच्छ मह़ीतल।
मानों मौग्ध्य सुगुण-लतिका ने दिये छटा-सुम हों जग भाने॥
सुस्वररूपी मंजरियों ने। सुम-पय दुहा अधर के कोने।
मानों मौग्ध्य मनोलीला का। हो सुराग-मधु, शिव प्रतिभा का॥
मधुर दृगों ने अपनी माया। दिखा मोह का जाल बिछाया।
मौग्ध्य-भाव-बंधन का विभ्रम। मानों फैला हो बन विक्रम॥
हंस गमन ने मान दिखाया। यौवन का जो मद का छाया।
मौग्ध्य प्रेम भावना की जनीं। हों मानों नवकलाएँ घनी॥
अर्धनिमीलित अधो विलोचन। करते सदैव जो प्रेमार्चन
देखकर भी नाहीं देखते। मनसिज सायक अपांग झुकते।
लेकर उन्हें त्वदीय मुग्धता। मम उर बसती भरे स्निग्धता॥

ना यनुगुं जॅली ! चॅलिमि नाटि चित्तमॅ याद्रै, मंदु ना
शायत रंजनंबयि प्रियॅबनर्थिचिन या दशल् कडुं
दीयमु लेमि चॅप्प ! विडदीसिन रेकुल पूवु चंदमै
पोयिन मैत्रि के गतुलु पो वलवंतलु दक्क नी भुविन् !

पॉरु पॅरुंगक ऑक कंचमुन भुजिंचि
मनसु नाटिन ममतल ननगि पॅनगि
वलचु जतलनु विडदीय दलचुनेनि
प्रेम नलयिंचु सृष्टि दैविकमु गादु ॥

नष्टमैनट्टि प्रेमखंडमुल कॉक्क
सुकवियक्षर जीव गीतिकय चालु नाकु
सकिय, विश्वास बाष्पमुल् चालु नाकु
लेदु वेरास प्रणय वल्लीमतल्लि "....

आमॅ —तगुनोई ? मित्रुडा नॅ
ञ्वगलन् दुरपिल्ल, प्रेमबंधमुलकटा
तॅगवोयी तॅग द्रॅम्पि
मिगुलग नित्तुरॅ मनंबु मिथ्याभ्रमलन् ॥

दैविकंबगु सुकृतिनि दक्क नवनि
जतल प्रेमोदयंबु संगतमु कादु
अंदु नस्खलित प्रणयानुरक्ति
चिर तपश्शुद्धि चे गानि दॉरक बोदु ॥

बॉन्दि नटिंचु प्राणि वलपुल् सुडियिंचिन वेळ निंद्रिया
ळिंदनियिंप कौतुक मत्तीमसमौ, नटबड्ड धर्मपुं
बंदमु लीड्चि यीड्चि अनपत्यमुखादिकमैन भूतर
क्ति दगुलूनि प्रेमरुचिकि न्वॅलियौट लॅरुगवो चॅली !

मन होकर आशायत रंजन । आर्द्र हुआ पाले प्रेम सघन ।
बनी वे अवस्थाएँ सुमधुर । जिन्होंने बढ़ाया प्रेमांकुर ।
पटल हीन सुमसम मैत्री की । प्रेम व्यथा ही गति धात्री की ॥

मिल जुल इक थाली में खाकर । स्नेह लता से जकड़े जाकर ।
जिन युगलों ने प्रीति बढ़ायी । उनपर विपदा किसने ढायी ?
प्रेम को सतानेवाली वह । सृष्टि न दैविक, देता हूँ कह ॥

हे सखि, ध्वस्त प्रेम-खंडों को । प्रेमावंध्य-शुष्क कांडों को
अक्षर-जीवंत गीत इक ही । अलम्, सुकवि ने यदि सरस कही ।
केवल विश्वासाश्रु चाहिए । प्रणयिनि ! मुझे न और चाहिए ॥

मित्र ! बिलखना ठीक नहीं है । यत्नों से टूटता नहीं है ।
प्रेमबंध जो पुष्ट सुदृढ़ है । भ्रम से घुलता दृढ़ मन-घन है ॥

बिन दैविक सत्कृति के जग में । प्रेमोदय होता न युगल में ।
फिर प्रणयानुरक्ति अविखंडित । बिन तपके होती न संघटित ॥

काया धरकर प्राणी साग्रह । इंद्रिय वश मोह में चला बह ।
चलता विषय लोल जो होकर । उस प्राणी का कौतुक कच्चर ।
नियत धर्म बंधन जो तजकर । निस्संतान रहे सुकर्म कर ।
भूत-प्रेम उसके मन मिलता । स्वाद प्रेम का उसे न मिलता ॥

चैत्रुतोवच्चु पल्लव समुदयबु
हिमवद्रागममुन नशियिंचिनट्लॅ
पङुचुदनमुतो जिगुरिंचु वलपुलॅल्ल
कळुकॅडलि कृशिंचुनु जराकांतदशल ॥

कलिसिनयंत मात्रमुन कादुसुमी चॅलि कारमंतरं
बुल नतुकंग जालिन अपूर्वपुलॅय्यॅ स्नेहमौ तद
स्खलित समस्त साधनमु ज्ञान विदग्धुल मार्ग सूत्र, मे
वलतियुनैन प्रेम परिपाकमु लिट्टुलॅ यन्वयिंचॅडिन् ॥

परम धर्मार्थमैन दांपत्य भक्ति
स्तन्य मोहनमैन वात्सल्य रक्ति
साक्षिमात्र सुंदरमैन सख्य सक्ति
पॉन्दु नाद्गिमगु प्रेमयंदॆ मुक्ति ॥

वलपुल पूलसॅल्लु बंदमुलेयग गुब्बजंट, नि
र्मलमगु वत्सलत्व मॅंदरागिल आवुल तल्लिबिड्ड ले
कलुषमु लेनि सत्प्रणय कांक्षलु मेळन जेय मित्रमुल्
मॅलगुदुरी रहस्यमॅ सुमी कनिपिंचॅडु सृष्टि यंदुनन् ॥

मनसुचे वाक्कुचेत कर्मबुचेत
कलुषितमुलु का दगिन वी वलपु लवनि ;
तपसुचे, तालिमचे, ध्यान धार चेत
लीनमै यैक्य मीय जालिनदि प्रेम ॥

शांतियु ब्रेमयुन्मधुरसंबुलु, पेशलराग लालित
स्वांतदळीपुटंबुलनु अध्यवि अस्खलितंबुलै मनुन्
अंतरमुल् पॅनंचिन प्रिय प्रणयंबुलु मायबोवु वि
भ्रांतियॅ काक प्रेम गलुपन् विड्दीय निमित्त साध्यमे ?

मधु दिवसों का पल्लव समुदय। वह पतझड़ में पाता क्षय।
प्रेमांकुर यौवन मोह जनित। निष्प्रभ होते जरा में कृशित ॥

देह मिलन स्नेह न कहलाता। स्नेह से हृदय-युग जुड़ जाता।
उसके साधन पुरुषाकर्षक। जो ज्ञानी के हैं पथ दर्शक।
इस विधि होकर असीम विदेह। सत्य प्रेम मधुर होता स्नेह ॥

धर्म युक्त दांपत्य भक्ति है। स्तन्य मधुर वात्सल्य रक्ति है।
सख्य सक्ति है साक्षात्सुंदर। इनका योग प्रेम के अंदर ॥

प्रेम पुष्प श्रृंखला बद्ध हो। सोहे कपोत युगल शुद्ध हो।
वत्सलता के मोती पोहे। धेनु वत्स सह अति ही सोहे।

अकलुष प्रणयाकांक्षासंयुत। मित्र रहेंगे नित ही अच्युत।
हे साथी! अद्भुत रहस्य यह। दिखता, सृष्टि में मुदावह ॥

मन वच कर्मों से बन कलुषित। मोह पाश इस जग में दर्शित।
ध्यान, सहन, तप से प्रीति सदा। विलसती एकता रत सुखदा ॥

शांति और प्रियता हैं मधुरस। राग हृदय दल संपुट में बस।
वे जीते हैं अच्युत अमलिन। मिलन वियोग क्षणों में प्रतिदिन ॥

काममु लेनि मेळन सुखंबुन ग्रालु लतासुमंबुला
राममुलंदुनुंडियु परस्परमुन्विडनाड ; वॅट्टु ली
प्रेम तपः फलंबुनु लविंप दॅगिंचितिविप्पुडो चॅली !
एमिटि की चिर प्रणय वृंत निकृंतन पाप कर्ममुल् ?....

वलपुलॅ रहस्यमुलु, तद्विफलदशलु नि
गूढमुलुनु तदर्थमुलुनु गोप्यमुलु
विदग्धुल कनुभवैकवेद्यंबुलिवियॅ
एल मालु गर्भ विमर्श यिपुड्डु सखुड !

कनुल नॉण्डॉरुलनु जूचुकॉनुटकन्न
मनसु लन्योन्य रंजनल् गॉनुट कन्न
कॉसरि 'येमोयि' यनि पिलुचुकॉनुटकन्न
चॅलुल किलमीद नेमि कावलयु सखुड ?

भावबंधंबुगा मणिबंधमंदु
तॉलुत गट्टिटति वी पट्टुतोरमीवु
विप्पॅदवॅ यिप्पु डनुचु जूपिंचि कनुल
नश्रुवुलु निंड बलुकलेदय्यॅ नामॅ ।।

निलिचिरि कॉण्डकवडिनि
ट्टुल नायिरुवुरुनु बॅनवडुंदमि पिद्पन्
जॅलिय करंबुन तोरमु
वॅलिवरिचॅ नतंडु मनमु वॅडलिंप वॅतन् ।।

काम-विरहित मिलन-सुख पाकर । लता द्रुम वनों लसें निरंतर ।
कैसे तुम हर्षित हो लवकर । प्रेम तपः फल प्रणयी होकर ?
कैसे उद्यत करने कर्तन । प्रेमतपः फल तुम प्रणय-सुमन ?
करो क्यों प्रणय-वृंत निकृंतन ? पाप कृत्य छोड़ो ज्ञानी बन ॥

प्रीति सर्वदा रहस्य होती । तद्विफल दशा निगूढ़ होती ।
गुप्त अर्थ उसका है होता । अनुभव वेद्य विज्ञ को होता ।
हे साथी ! क्यों करते हो यह जननी गर्भ विवेचन दुस्सह ?

एक दूसरे के दर्शन से । पारस्परिक मनोरंजन से ।
अन्योन्य 'अजी' संबोधन से । बद्ध मित्र चाहते क्या मन से ?

कौशेय सूत्र बाँधा तुमने । मम मृदुल कलाई में लसने ।
भाव-बंध सा है उस दिन से । खोलो अब यह निश्चित मन से ।
आगे बोल सकी न, चुप रही । अश्रु नदी थी सरस बह रही ॥

दोनों इस विधि खड़े रह गये । प्रेम श्रृंखला बद्ध बन गये ।
सूत्र बंध फिर प्रिय ने खोला । या अपना च्युत मानस खोला ॥

चॅन्त लवंग वल्लिकलचे कडलह्लि किशोरशाद्वला
क्रांतमुलैन पादुलकु गट्टॅडु चल्लनि नीरु वारुकु
ल्यांतमुलन् पॅरुंगु तरुणार्द्रतृणांकुर पाळि गिल्लि आ
कांतुडु विंतयैन यॉक कंकणमुन् रचियिंचॅ निंपुगन् ॥

नवकमॅडवोनि तृणकंकणमुनु केल
नंदुकॉनि यामॅ पयि नयनांचलमुलु
मरलिचि "सकिय! मनप्रेम मधुरलांछ
नंबिदियॅ सुम्मि" यनुचु हस्तंबु दॉडिगॅ ॥

ई तृणकंकणंबु भरियिंतुमु नी मणि बंधमंदु सं
प्रीतिनि अप्पुडप्पुडु वलपिंपुल नॅय्यमु ज्ञप्तिगॉन्न प्रा
भातिक वेळ नी प्रणय बाष्पजलांजलि नितयिच्चि ये
रीतिनि वाडकुंड नलरिंपु मिदे तुदि वांछ नॅच्चॅली!

अनुचु मोगमावलकु द्रिप्पॅ तरुणकिरणु
डाश मार्चिन यट्टु ला यमृतवतियु
प्रेलि वलपुटुंगरमुनु वॅडलदीसि
प्रिय सखुनि हस्तमु नलंकरिंचु चनियॅ ॥

"वलपु नशियिंचिन प्रेम निलुव गलद
येनि कलनैन कलुषमु गानि स्नेह
मृदु मधुरसानुभूतिनि बॉदलि मनमु
नीडलट्टुल नैक्यमॅद्दमु गात!

अपुडदृष्ट देवत करमल्ल साचि
ललितमुग जल्लु नमृताक्षतल विधान
वकुळ सुकुमार तरु मतल्लिकलनुंडि
जलजल बूलुरालॅ नाजंट मीद ॥

समीप दूर्वायुत थालों के। शीतल-जल की कुल्याओं के
मृदुल तरुण तृण तब कर में धर। लता लवंगी से लपेटकर।
प्रेमी ने अति अद्भुत कंकण। प्रेम का बनाया शुभलांछन।

हाथ लिए वह पावन कंकण। विवश गड़ा सुदती पर वीक्षण
कर में पहनाकर तब साजन। बोला, "यही प्रेम का बंधन ॥

तुम मानो न इसे साधारण। मणिबंध में करो सखि! धारण।
जब प्रभात में हो प्रेम स्मरण। तब इसको दो प्रणय-भाष्प कण।
देखो! यह न कभी कुम्हलाये। यह अंतिम इच्छा फल पाये ॥

बोलते मुड़ा उसका आनन। ज्यों हो तरणि दिशा परिवर्तन।
अमृतवती बोली प्रिय के कर। अपनी अंगूठी पहना कर।

"नसे मोह जो है नित अस्थिर। प्रेम का रहे यदि मूल्य अमर।
सर्वकाल इस स्नेह से ग्रथित। मधुर सहानुभूति से प्रमुदित।
मिल जुलकर हम रहें परस्पर। छाया-देह समान निरंतर ॥

वकुल तरु से सुवासित सुंदर। वर्षित सुम मृदुता से उनपर।
हैं मानों अमृताक्षत बिखरे। भाग्यदेवता के कृपा-भरे ॥

वांछलु

मूलः श्री शिवशंकर स्वामी

1. अहहा ! अनंत विपुलाशल जिक्कि जिक्कि
बहुकालमीयॅडद् बाधलु चॅन्दॅ नाथा !
सहियिंप लेक बहु साधन चेसि आशा
गहनांतरंबु विडगलूगिति नेटिकॅद्‌लो ॥

2. इपुडी मनस्सुनकु नॅन्तयु शांति युष्मत्
कृपचेत संघटिलॅ ! ईतनि चित्तवृत्तुल्
विपरीत मार्गमुल वॅन्ट परिभ्रमिंप
कपुडुन् भवच्चरितमॅ स्पृशियिंचु देवा !

3. सकलंबु नी चरण सन्निधियंदु नाथा !
प्रकटम्मुगा विडिचि, बाध्यत द्रोसि पुच्चन्
अकलंक मय्यॅ मनसाशलु वीडॅ वांछा
लिक मात्रमॅन्नटिकि देव तॉलंग कुंडुन् ॥

4. कानेति गायकुड कर्मवशंबुचे वाक्
स्थानंबु मंदुनकु तावलमय्यॅ ; ऐनन्
नेनॅल्लवेळलनु निंडु मनम्मु तोडन्
नी नाम वर्णमुलने जपियिंतु नाथा !

5. पालिंचु देवत नुपासन चेयमिन् वा
ङ्मालिन्यमय्यॅ, अणु मात्रमुवीडदैनन्
गालिंचि शब्दमुलु काव्यमुलल्लुदुन्नी
लीला कथामृत विलीन मनंबु तोडन् ॥

अभिलाषाएँ

अनु: श्री रापर्ति सूर्यनारायण

1. नाथ! हृदय को अंत हीन चल आशाओं ने
जकड़ा तो बहु काल सताया बाधाओं ने।
मैंने स्थिर साधना की, उन्हें जब सह न सका
गहनाशा-कांतार किसी विधि मैं छोड़ सका ॥

2. इस मन ने है भवत्कृपा से प्रशांति पायी।
इस जन की है चित्तवृत्ति पावन हो पायी।
परिभ्रमण विपरीत पथों में चित्त न करके
देव! सदा तव चरित छुएगा पद गा करके ॥

3. हे ईश्वर! सर्वस्व तव पदों में अर्पण कर
सकल बाध्यता रहित हुआ मन पवित्र होकर
अब इस मन ने विविध दुराशाओं को छोड़ा।
पर वांछा-त्रिक तो न जायगा उससे छोड़ा ॥

4. गायक तो मैं नहीं हुआ नाथ! कहूँ क्या?
दुर्विधि से वाक्स्थान मंद को मिला, करूँ क्या?
फिर भी मैं सब समय विबुध हो सुधा भरूँगा।
त्वन्नामाक्षर स्वांत शुद्ध कर जपा करूँगा ॥

5. विश्वं भर पूजा न हुई थी, कलुषित भाषा।
पर छूटी अणु मात्र न मेरी यह अभिलाषा।
ढूँढ़ ढूँढ़ कर शब्द काव्य रचना कर पाऊँ।
त्वल्लीला-सत्कथा लीन मन हो सुख पाऊँ ॥

6. नार्कन्नगा दगिन नैपुणि चित्रविद्यन्
स्तोकम्मु कानि मृदुतूलिकलो लिखिंवुन्
लोकैक नायक! विलोकन पर्वमैन्
नी कम्र मंगळ विनील शरीर शोभन् ॥

---

6. मेरी है निपुणता अल्प वर चित्र-कला में ।
सकल लोक परिपाल! रंग भर सुतूलिका में
तावक मंगल कम्र-नील तन की सुंदरता
मृदुल कल्पना पूर्ण खींच लूँ प्रियता भरता ॥

संदर्शनमु

मूलः श्री शिवशंकर स्वामी

1. निनु गनिन यंतनॅ निखिल लोक गंभीरता
मनोज्ञ महिताभयॅ मद्किकि दोचु सीमंतिनी !
जनिंचु वॅनु वॅण्टने चकित लोचनांतोल्लस
द्विनम्रत घनम्मुगा विमलभाव संश्लिष्टमै ॥

2. चिरम्मुग मॅलंगु ना स्मृति पथम्मुनन् सम्मद
प्ररोह मुधुरम्मुगा भवदमोघ भूरिप्रभा
परीवृत शरीरमुन् परमपांडु कौशेयमुन्
करेणु वर यानमुन् कटककंकणारावमुन् ॥

3. प्रभाव सरसीरुह प्रतिभट प्रभावोल्लसत्
स्वभाव रमणीयमौ वदन बिंब मी प्रॉद्दुनन्
शुभांगि ! युदयिंपगा सुहृदमामकांतर्य्यथा
विभावरि रयम्मुनन् वॅडलॅ नेत्रमार्गम्मुनन् ॥

संदर्शन

अनुः श्री रापर्ति सूर्यनारायण

1. हे सीमंतिनि ! तुम्हें देखकर मानस भू अति भाती है ।
सर्वलोक गंभीरता तथा महिताभा सरसाती है ।
साथ उल्लसद्विनम्रता भी चकित नयन के कोनों की
विमल भाव-संश्लिष्ट हुए तब जगती है रस खानों की ॥

2. तावक भूरि विभा परिवृत तन विपुल क्षौम अति सुंदर था ।
मद दंतावल यान तथा ही कंकण का अति मृदु सुर था ।
मेरी स्मृति के अनंत पथ में ले सम्मदयुत सुमधुरता
करते हैं संचार निरंतर दिखा नर्तकीय चतुरता ॥

3. वदन बिंब कल्यांबुज प्रतिभट, प्रकृति सिद्ध सुंदरता से
सप्रभाव हो ! हे शुभ तन ! जब उदित हुआ तो ममता से
मेरे उर की सुस्थिर पीड़ा रूपी निशीथिनी भागी
जलद नयन के तरल मार्ग से आभा फैली मन रागी ।

विभ्रमंमु

मूल : श्री शिवशंकर स्वामी

देवि ! ई नेत्रमुलकु याहच्छिकमुग
त्वन्मनोहर रूप संदर्शनाभि
सिद्धि कै यॅन्नि सार्लु निर्लुचितिनो तॅलिय
दहह ! वातायनम्मुल कभिमुखमुग ॥

विमल कमनीय वदनारविंद मधुर
वीक्षण क्षण रक्ति देवि ! तुवदीय
सौध सविधम्मुनकु नॅन्नि सार्लु तीर्थ
यात्र सलिपितिनो दॅल्प नलवि कादु ॥

अमल संजीव नौषधंबौ त्वदीय
शांत रम्य कृपाकटाक्षम्मु कॉरकु
चॅलगि हर्म्यमुनकु प्रदक्षिणमुलॅन्नि
चेसिनाडनो लेक्किंचि चॅप्पलेनु ॥

हृदय भार घनध्वांत विदलनाच्छ
चंद्रिका कांति पूर युष्मन्मनोज्ञ
दिव्य दरशनमुनकु मंदिरमु लोनि
कॅन्नि सारुलु वच्चिचति नॅरुक लेदु ॥

विभ्रम

अनु : श्री रापर्ति सूर्यनारायण

तावक मनोज्ञ-रूप-सुमन के संदर्शन की
इन नयनों को सिद्धि मिलाने योग्यार्चन की
अभिमुख हो मैं अहो! खड़ा था वातायन के
ज्ञात न कितनी बार खोलकर द्वार नयन के ॥

तेरे सुविमल कमनीय वदन मृदु पंकज का
लेकर मधुर विलोकन क्षणिक राग हृत्पंकज का
मैंने यात्रा की है तेरे सौध सदन की
कितनी बार न बता सकूँ, गति विचित्र मन की ॥

उत्सुक मैं तव शांत कृपा वीक्षण पाने का
जो संजीवन अमल प्रेम जीवन देने का ।
मैंने इसके हेतु, सौध की परिक्रमाएँ
कीं कितनी ही अगणित, इसको कौन बताए ?

स्वच्छ चंद्रिका कांति पूर्ण दरहास तुम्हारा ।
हृद्गत भार तमिस्र हर सुधाकलश हमारा
मैं तत्प्राप्ति निमित्त ही भवद् गृह में आया ।
अगणित बार सुधा का सुमधुर जीवन पाया ॥

उपहारमु

मूल : श्री पिंगळि-काटूरि (कविद्वय)

पॉट मरिंचु मुन्न पुणिकिति नॉक कॉन्नि
कसट्टुवाय नट्टि पसरुमॉग्ग
लरसगम्मु विच्चि, यरविच्चि, नॅरिविच्च
नट्टि पूलु पुणिकि यंदु निंदु
ई पूदंड ग्रुत्तुननि यॅप्डु तॉडगितिनो
अति प्रयत्नापचितम्मु ला सुमम्मु
लन्नियु विस्मृतयत्प्रपंच धूळी
परमाणु कोट्टुल विलीनमुलै
पॉड मासिपोयॅनो, चेपर्डे नेटि की सुमम्मु
चेकॉनि चेतु पुनः प्रयत्नमुल् ॥

ऑक्कॉक सुमम्मॅ एर्चि, नीकुपद सेय
गुणमुकॉन नल्ल नल्लन ग्रुच्चुचुंड
पूर्व पूर्व ग्रथित मैन पूलुरालि
मॉदलु कन्पिंचदी स्रजम्मुनकु नाथ !

पूलु रालु गाक पॉलिवोक तुदमॉदल्
निलुचु सूत्रमैन ने ग्रहिंचि
पूलु रालिनट्टि मालिकतॅत्तुना,
साक्षिगाग ना प्रयत्नमुलकु ॥

उपहार

अनु: श्री हनुमच्छास्त्री अयाचित

विकसित होने से पूर्व कुछ नन्हीं-नन्हीं कलियाँ चुन कर
तोड़ लिया ऐसे मैंने अर्धविकसित पुष्पों को ले कर।
जाने कब से यह सुंदर हार बनाना आरम्भ किया
कितने यत्नों सेफूलों को चुनकर अपने हाथ लिया
फिर भी ये प्रसून धरा के किनकिन धूलिकणों में लीन
होकर खो बैठे निज तत्त्व, नियति नटी के चरणाधीन ॥
आज मेरे कर में यह प्रेमिल एक मात्र लतांत आया
इसे पुनः लेकर हार अभी गूंथूँगा मैं मन भाया ॥

तुम्हें भेट करने के मिस मैं गुणसूत्र में, हे प्रियवर!
धीरे-धीरे गूंथ रहा था, मधु सुमनों को चुन-चुन कर
पूर्व पूर्व में गुंथे हुए फूलों के यों जाने से झड़
माला का आरम्भ है कहाँ, पता नहीं चलता है झट ॥

कोई बात नहीं यदि ऐसे झड़ जाते हैं फूल यहाँ,
आदि अन्त में लगे सूत्र को ग्रहण कर ले चलूँ वहाँ,
पुष्प विहीन माला ले कर होने दो जीवन क्रियमाण
कम से कम मिल ही जायेगा मेरे यतनों का प्रमाण ॥

इंत तोट नाटियिच्चि पोयिन मन्म
थाति मन्मथुनकु नकट, पुष्प
शून्य सूत्र मॅट्लु सूडिद गाविंतु
रस विहीनुलगु विरक्तु लट्लु !

प्रति तरुवुन् व्रतिव्रतति पल्लव तोरण
गट्टि, तोटलो कुतुकमु मीर पूसरुलु
मुच्चि यिट्टुल् निनु वेचियुड
ना यतनमुलॅल्ल मानि तुदकंतयु
मालिक सेयुवॉण्टॆ ने क्षितिरुह मैन गानयिति
चॅल्लॅर, तीवयु काक पोयितिन् :

कन्नुल वॅन्नॅलैन निनु कन्गॉन गल्गिग
सुधाप्रपूरमौ तिन्ननि नी यॅलुगु विनि
तेपकु ने निनु बल्करिंचु भाग्योन्नति
कल्गुनाडयिन नो प्रिय, नीयॅद व्रालि
नी गळम्मु न्नव पुष्प मालनयि
पूनक मानुदुना मनोधवा !

उपवन-दाता वह मेरे प्रिय, नवमन्मथाकार सुकुमार ।
कैसे दिया जा सकता—उसको पुष्प शून्य सूत्र उपहार ?
अवांछित अरसिक कोई जन ही कर पायेगा यह कार्य,
मैं तो सहृदय रहा, नहीं कर सकता अनुचित कार्य अनार्य ॥

हर बिरवा हर लता-बेल का बनकर सुन्दर बन्दनवार,
लगा प्रतीक्षा में, कौतुक से गूँथ रहा पुष्पों के हार
पुष्प मालिका में रूपांतरित करने को सारा जीवन
छोड़ न सका अपने यत्न, हा! मैं न बना तरुवर या बेल!

नयनों के हित मधुर चाँदनी जैसी प्रतिमा लख कर,
सुधा प्रपूरित मधुर ऋजु वाणी सुनकर
जिस दिन प्रेमालाप हेतु योग मिलेगा
झुक कर वक्षःस्थल पर तेरे गले में प्रियवर!
नवल पुष्पमाला सा शोभित हूँगा आकर ॥

रसालमु

मूल: श्री पिंगळि - काटूरि

1. काल वशमुनन् विसरु गाड्पुलकुन् मुदुराकु पुट्टमुल्
रालग बाटसारुल परामरिसिंपग लेक संपदल्
दूलिन दातवोलॅ जिगि दूलिन यी यॅलमावि गुन्न या
काल वशम्मु चेतनॅ सखा! विकसिंचॅडि सौरु गंटिवे!

2. चूचुकॉलंदि विंतलगुचुन् मनमुन् गरगिंचि नन्नु प्रे
रेच तॉडंगॅ नीदु नुनु रॅम्मल कैवडि मोसुलॅत्तु वा
चा चतुरत्वमंतयु रसालम! नीपयि जूपुमंचदे
नी चिवुराकु तळकुलनु, नी पुवुगुत्तुल कुल्कु नव्वुलन् ॥

3. परिणत सत्फलम्मुल, सुवासनलीनु सुमम्मुलन्, मनो
हरमगु तेनॅ दॉन्नल लतांत रजम्मनु कुंकुमम्मु प
ळ्ळरमुन निंचि चेत गॉनि लेनगवॉप्पग तोट वाकिटन्
सुरुचिर मूर्ति तो निलुचु शोभन देवतवीवु भूजमा!

4. कलिमि दॉलगि यत्नमुलु गालिकि बोयि विचार मेघमुल्
दलमुग जुट्टुकॉन्न परितापमु चेंदुटॅ कानि यॅन्नडुन्
दॅलियक पोति जीवमुन तेज मॉकिंड्ड नशिंपकुन्न नी
वॅल मधुमास संजनित भाग्यमुलंदॅद नन्न धर्ममुन्।

5. पायन् जालनु निन्नु, नन् विडकुमी प्रार्थिंतु नी पंड्लुगा
नी या पूवुलु गानी कॉम्मलनु गानी चेत मुट्टन् जुमी
नीयानन् वचियिंतु नम्मुमु निनुन् वीक्षिंचुचुन् जॉक्कि नी
छाया शीतल सैकत स्थलि मनश्शांतिन् गनुल् मोड्चॅदन् ॥

रसाल

अनु: डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. गरम हवाओं में पत्र पके जब झड़ते काल विवश
पथिकों को आश्रयदान न कर पा दरिद्रता के वश
संपत्ति विहीन बने दाता सम यह रसाल विलसित ।
इसकी शोभा देखी मित्र, काल के वश ही विकसित ?

2. हे रसाल ! ज्यों ज्यों देख रहा, जाता है हृदय पिघल
पल्लव कांति और पुष्प गुच्छ तेरे करते खिल खिल
मुझको प्रेरित, अभिनव वाक्चातुर्य दिखाऊँ तुझपर
जो नन्हीं टहनियों के सम फूट रहा तुझको लखकर ।।

3. फल पक्व, सुगंधित सुम सुंदर, मधु के दोने मनहर
सुम रज रूपी कुंकुम को भी थाली में भर भरकर
अमराई के आंगन में तेरी, हँस मुख को लेकर
सुरुचिर मूर्ति विराजित है शोभा की देवी बनकर ।।

4. धन खोकर, विफल प्रयत्न बना, हो चिंता-मेघावृत
रोना ही सीखा मैंने हो होकर दुख से आवृत
किंतु न जाना यह धर्म अटल, तेज रहा जीवन में
यदि, पा सकता भाग्य वही जो तू वसंत उपवन में ।

5. छोड़ नहीं सकता तुझको, मत छोड़ मुझे विनती यह
स्पर्श न करूँ फलों को पल्लव फूलों को मम प्रण यह
तेरी शपथ, तुझे देख देख तेरी छाया शीतल
सैकत में कर विश्राम बनूँ सुनिमीलित नेत्र-कमल ।।

6. తలిరాకు జొంపమ్ము తళుకు నిగ్గులు నాదు
నేత్ర యుగమమ్మున నిండనిమ్ము
పూ దేనియల చొక్కంపు దీవు రుచులు వా
గ్విలసనంబునకు లభింప నిమ్ము
తళుకు బంగారు చాయ గల పండుల మిసిమి శ
రీరమ్మునకు నావరింపనిమ్ము
పూవు గుత్తుల కమ్మతావులు మా యూర్పు
గాలి తో నైక్యమ్ము గాంచనిమ్ము

ప్రకృతి సౌభాగ్య మెంతయు రాశియైన
విధమునన్ దోచుచుంటివి వేదకి
యీ సరికి లభ్యమయ్యె నుపాసనాధి
దేవత యటంచు నిన్ను నర్థించుచుంటి ॥

జంతుకోటికి సంతాప జనకమైన
చండభానుని కర సహస్రమ్ము నుండి
యమృతము ప్రహించు శక్తి నీయందె కలదు
దాని దయసేయుమమ్మ ! యీతనికి సుంత ॥

6. चमक पल्लवों की मेरे नेत्र युगल में भरने दो ।
स्वाद् पुष्पमधु का भी मेरी वाणी में भरने दो ।
मधुर फलों की स्वर्णाभा मम शरीर पर छाने दो ।
मंजरियों की सुगंध मेरी सांसों में आने दो ॥

7. लगते तुम मानों राशीकृत
सभी प्रकृति सौभाग्य ।
खोज पा सका निज उपास्य को,
यह मेरा सौभाग्य ॥

8. संताप जनक रवि किरणों से
तुम ही कर सकते अमृत ग्रहण ।
वह थोड़ी शक्ति मुझे देना
करके मेरी प्रार्थना श्रवण ॥

मृत्युंजया!

मूलः श्री माधवपॅद्दि बुच्चिसुंदर रामशास्त्री

1. मॅड नागन्नकु नॉक्कटे बुसबुसल्, मेनन् सगंबैन या
बिड तो नी कॅपुडॉक्कटे गुसगुसल् वीक्षिंचि मी चंद मॅ
क्कड लेनंतग नॅर्तिपै रुसरुसल् गंगम्मकुन्, नी चॅविं
बड्डटेलागुनॉ मा मॉरल् तॅलियदप्पा माकु मृत्युंजया!

2. पॅद्दं जेय मनस्करिंपदु निनुन् बिड्डं बलॅ जूचुचुन्
मुद्दुंजेयुचु मुच्चटाडुकॉनुचुन् मूपंदुनन् मोयुचुन्
सुद्दुल् सॅप्पुचु चेप्पिनन् विनुचु निन् जॉकिंकचुचु जॉक्कुचुन्
पॉद्दुल् पुच्चुट लुन्न जालु नितरंबुल् गोर मृत्युंजया!

3. इग नेन्नॉक्क कणम्मु मुट्टनु सुमी मी वल्ल, कैलासमुं
दिगि ना यिंटिकि वच्चि, नायॅदुट तंड्रिबोलॅ गन्पिंचि त
ल्गि नन्नं दिनिपिंचि ना पलुकु चॅल्लिंपन् वलॅन् गोरु कॉ
न्दुगदा बिड्डलचे पराजयमु तंड्रुल् देव मृत्युंजया!

4. चूडं जूड महाश्मशान मनिपिंचुन् नाकु नी लोक, मिं
देडन् गात्तिडबोव नेरि पयिनो ये वेयुचुन्नट्टुले
लो डक्कय्यॅडि गानि नी महिम या लोनॅ निवारिंचि, नी
क्रीडा रंग मटन्न माट स्मृतिकिं गीलिंचु मृत्युंजया!

5. नालो कॉन्नि दिनालनुंडि यॅवडो नागस्वरंबूदुचुन्
मूलाधारमुने कदल्चॅडिनि तन्मूलम्मुनं जेसि का
बोलुन् श्वासयॅ याडगा दॉडगु नॅपुड्डुन् देवता सर्पमै
पोलं जूडग नीवॅ यिंदुकु गतंबो यॅमॉ मृत्युंजया!

"मृत्युंजयशतक" से

अनु: डॉ. इ. पांडुरंगाराव

1. कंठ प्रदेश का नाग करता 'फू फू' कर फूत्कार निरंतर ।
   अपनाकर आधातन गिरिजा फुसफुस करती है निसि वासर
   देख जिसे सिरपर गंगा करती रिस रिस रोष बड़ा भारी
   विनती तुझे सुनाई दे हे मृत्युजय! किस भांति हमारी?

2. मुझे नहीं अच्छा लगता है तुझको बड़ा बनाऊँ ।
   बालक मान, दुलार प्यार से बहलाऊँ, बह जाऊँ,
   पीठ चढ़ाकर अच्छी बातें बतलाऊँ फिर सुन लूँ,
   बीते यों जीवन मृत्युंजय! और न इच्छा कर लूँ ॥

3. जब तक अपना गिरि तजकर घर न हमारे आओगे,
   पास बुलाओगे न पिता सम माता सम न खिलाओगे,
   खाना तनिक न छूने का मैं, जब तक बात न बनती है ।
   मृत्युंजय! अपने बेटे से हार पिता को भाती है ॥

4. परख परख कर सोचें तो यह जग लगता है महास्मशान ।
   यहाँ कहीं पर पाँव पड़ा तो होता मन में ऐसा भान ।
   कहीं किसी पर पैर रखा है पर इतने में खुलते नेत्र ।
   कहती मृत्युंजय! तव महिमा "यह मेरा ही क्रीड़ा क्षेत्र ॥"

5. जाने कौन बजाता मेरे अंतर कुछ दिन से यह "*नागस्वर" ।
   विचलित मूलाधार तभी से लगता है सुन सुनकर यह स्वर ।
   दिव्य सर्प सा नाच रहा है अंतर में यह श्वास निरंतर ।
   कैसी यह लीला मृत्युंजय! तेरा ही मुखरित है यह स्वर ॥

---

* सँपेरे की तूमड़ी

6. नी नामम्मु जपंबॉनर्चिन कॉलदिन् विश्व गानम्मुगा
नानाटं बरिणाम मंदि यट्टुपैनन् ब्रह्मगानम्मुगा
रानुन् रानु ध्वनिंचि लोन निपुड्डुरूंद्लूगु निकॅन्दुनन्
लीनं बौटकॉ! तृप्तिकात्म कॅट्टुलुन् लेदय्य मृत्युंजया!

7. ऍल्लन् नीवयि पोयि नीवु तलपै ये चिन्नि पुव्वट्लॉ जा
बिल्लि दालिचियुंड वॅन्नेललुगा विश्वान नीकांतुले
वॅल्लि गॉल्पॅडिनट्टुलुन्नयवि, यी वेळा विशेषम्मुचे
वॅक्कं बुच्कुमिंक दीनि मनसे वेरय्य मृत्युंजया!

8. लोकम्मंदुन गाक वॅन्नॅललु लोलो कायुनट्लुंडॅ न
य्याकाशम्मुन नुन्न जाबिल्लियु, नायंदुन्न डॅन्दम्मु नि
ट्लेकाकारत नॉन्द नेमि कतमो! यी यात्म संबंधमुन्
नी कारुण्यमु चेत नेर्पॅड्डुट गाने तॉचु मृत्युंजया!

9. नावंबॉलि प्रयाण मैनदि महानंद प्रवाहम्मुलो
भावं बॅच्चटिको कनुल् पगिलि पोवं जॉच्चु धावळ्यमे।
लावण्यंबति गण्यमे! यॅट्टुलु कैलासम्मोको बॉन्दिने!
कैवल्यंबॉकॉ जीवमुंडगनॅनिकम्मॉक्कॉ मृत्युंजया?

10. ऎरो वॅन्नॅल चीकट्लुल् गलसिनट् ली पर्वताग्रान नु
न्नारे! यॉक्करिलोन निंकॉकरु लीनंबौचु नुन्नट्टुलुन्
वेरौचुन्नट्टु कानुपिंचॅदरॅ! कानी, वारिके वारु प
ट्टीरे! यादि पुराण दंपतुलु कारे वारु! मृत्युंजया!

---

6. विश्व गान में परिणत तेरा नाम हुआ है जपते जपते ।
ब्रह्मगान में फिर ध्वनित हुआ हृदय झुलाते बढ़ते बढ़ते ।
उमड़ रही अब फिर यह लहरी पता नहीं किसमें होने लय ।
कहीं नहीं संतोष यहाँ पर चिर अतृप्त आत्मा मृत्युंजय !

7. फैलकर जगत में तू सिरपर कुसुम समान चंद्र धरता है ।
तेरी छवि-धवल चंद्रिका से सब विश्व समुज्ज्वल होता है ।
यह दुर्लभ योग न जाने दे लीला की वेला का मधुमय ।
इसका न भरोसा चंचल है मन इस पागल का मृत्युंजय !

8. जग में जगमग तरल चाँदनी छिटकी सी लगती अंतर में ।
उधर गगन में विमल सुधाकर इधर हृदय मेरे अंतर में ।
दोनों एक हुए हैं कैसे ? संबंध निराला आत्मा का ।
मृत्युंजय ! लगता है यह फल तेरी लीलामय करुणा का ।

9. भावुकता चल पड़ी तरी सी महानंद धारा में बहकर ।
यह कैसी धवल प्रभा जाती जो आँखों में चकाचौंध कर ।
गण्य कहीं यह लावण्य बने ? हरगिरि क्या सशरीर मिलेगा ?
सही सही कह दे मृत्युंजय ! जीते जी कैवल्य मिलेगा ?

10. इस गिरि के उत्तुंग शिखर पर युगल मूर्ति कोई उज्ज्वल सी
ज्योत्स्ना जैसे तम से लिपटी मिली जुली फिर अलग अलग सी
जग से तो दूर रहे, पर वे स्वयं हमें प्राप्त न होंगे क्या ?
मृत्युंजय ! यही आदि पुराण दंपति है ? मूल जगत के क्या ?

शिवरात्रि की प्रभा

आँध्र में शिवरात्रि के दिन भगवान शिव की आराधना में "प्रभाएँ" बनाई जाती हैं और उनका जुलूस निकालकर भक्त लोग शिव के चरणों में उन्हें समर्पित करते हैं। पहले लकड़ियों से एक आयताकार या वर्गाकार ढाँचा बनाया जाता है और उसपर अर्धचंद्राकार रूप में बाँसों का एक और ढाँचा बनाकर दोनों को जोड़ दिया जाता है। उसको रंगीन कपड़ों और कागजों से सजाया जाता है और छोटी बड़ी घंटियाँ लगायी जाती हैं। उसको "प्रभा" कहा जाता है। उस पर शिव की मूर्ति या लिंग रखा जाता है। भक्त अपनी अपनी शक्ति के अनुसार छोटी या बड़ी "प्रभाएँ" बनवाते हैं और भगवान को भेंट चढ़ाते हैं और फिर वापस ले जाते हैं।

कोई कोई प्रभा छोटे ताड़ वृक्ष की जितनी ऊँची होती है जिसे बैल-गाड़ियों पर ले जाना पड़ता है। शिव भक्ति के आवेश में आकर भक्त "हरशरभ, हरशरभ," "हर हर महादेव" आदि का उच्चारण करते हुए प्रभा ले जाते हैं और बीसों मील ले जाते हैं। उस अवसर पर एक बड़ा मेला लगता है। विभिन्न स्थानों से लोग उसे देखने आते हैं और प्रभाओं के दर्शन कर भाव विभोर हो जाते हैं। लोग "प्रभाएँ" ले जाने की शिव की मनौती भी मानते हैं। वह दृश्य बड़ा उत्तेजक और रौद्ररसपूर्ण होता है। ऐसी प्रभाओं का प्रस्तुत कविता में शिवतांडव के रूप में भावुकतापूर्ण सुंदर वर्णन है।

शिवरात्रि प्रभा

मूल : श्री कविकॉण्डल वेंकटराव

कालकंठुनि नाग सर्पमु
कुबुसमूड्ची पडग ब्रुस्संदि
रॅण्डु नालुग्लु
गंड्डु मीसालट्लु दूसिंदि
चॅवुलु मोसिंदि
नॉगसॉर मूदेदि एवरोयि
राग मॉलिकिंचेदि एवरोयि
कारु नल्लनि काळरात्रि ।

नॉसट गॉसरिन मूडो कन्नु
निवुरु लूदिन कॉलिमि दॅगडि
नॅगडि द्रिप्पिदि
पॉगलु गप्पिदि
कम्मरयिते इनुमु करग

शिवरात्रि की प्रभा

अनु: श्री कोट सुंदरराम शर्मा

गरल कंठ के काल नाग की
मृदुल केंचुली छूट पड़ी ।
मानों मूँछें वीराद्भुत की
दो जिह्वाएँ निकस बढ़ीं ।
फूट पड़ा फूत्कार फणा का
तीन भुवन के सिहरे कान ।
कौन सकेगा बीन बजा
अवशंवद को वश में लाने
कौन कर सके रागालाप
घटाच्छटा सी काल रात्रि यह !

अक्षि तीसरी भाल पिहित जो
फूँक उड़ाया छादक भस्म
क्षोभित होकर ज्वलित उठ पड़ा
महा वह्नि का मानों कुंड ।
धूम्र-अभ्र के आच्छादन से
अंधी भूत हुए जग तीन,
सर्व धातु को द्रवित कराने
वाले वैश्वानर के पास
अपना कालयस पिघलाने
साहस कौन करे लोहार ?

सोमरयिते चलिनि काग
एवरु वच्चेरोय
एवरु मॅच्चेरोय
कारु नल्लनि काळरात्रि।

अर्ध भागपु महंकाळी
कर्थ यदि कालेदा
एमो?
पुनुकुला गलगललु विंट्ट
कुनुकु गन्नादो
नाथुनी वद्दनुदु नाद्यमु
नाथु नी वद्दनदु
अररे! आडि पोतुन्नाय्

वाडि मुम्मॉनवालु
हुतभुक्
अजकपालं
ढक्कडुक्कडुक्
नालुगु सेतुल नाडुलौतुन्नाय्
अश्शरभ! शरभ!
पंदॅमु वेसेदि ऍवरोय्
कुंदनमु गासेदि एवरोय?
कारु नल्लनि काळरात्रि!

जडी भूत नर कौन आ सके
अपने को तापित करने ?
घटाच्छटा सी कालरात्रि यह !

अर्धदेह की महा कालिका
समझी यह विक्षोभ नहीं ?
मुंडमाल की 'कडट कडट' को
सुनते सुनते ऊँघ गयी ?
क्यों नहीं कहती; नाथ बस करो !
महा भयद यह नाटय अहो !
'हाँ' भी कहती नहीं चंडिका
मूढ बनी यह प्रकृति सभी ।

देख देख ये कर धृतास्त्र सब
झूम रहे हैं भयदाकार
प्रलयंकर अति लोकलय का
हुत भुक् है यह निशित त्रिशूल !
अज कपाल यह डमरू "डुब डुक्"
चार करों की नाडी सी
बनें, शरभ ! ह: शरभ !! वेग से
पूर्ण रोदसी घूर्णित सी !
भीषण इस क्रीड़ा में पण ला
कौन खेलने आयेगा ?
अपना सुवर्ण तीक्ष्णानल में
भस्मसात् कर जायेगा ?

चंद्रमकुटमु
जटा जूटमु
सांद्र नीलपु जद्ल पापट
सुरिगि पोतुन्नाय्
चक्कनी मुव्वन्नॅ चर्ममु
अक्कळिंचिन पॉट्टपैनि
अंटि युंडी अंटकुन्नादोय
आकला यनि यनेद्ॅवरु
सोकुला यनि यनेद्ॅवरु
कारु नल्लनि काळरालि !

मोकरिंपुलु गावु
अवि मरि
बूकरिंपुल निलुपु गादु
आकडकु बड्डु नॉक्कयंज
यी कडकु बड्डु नॉक्कयंज
एकमुग जेयुचुनु
नड्डुमॉक
रेखगा दा वंचि गॉन्चु
संदियं लेकॅन्चु वारॅवरु ?
चिंदु अनि तोतॅन्चुवारॅवरु ?
कारुनल्लनि काळरालि !

सांद्र नील इस व्योम केश के
विद्युतवत् सीमंतों में,
चंद्र मुकुट यह जटा जूट वह
उथल पुथल हो झूल उठे।
चारु चित्रित व्याघ्र अंबर
महानट की शुष्क कटि पर
संलग्न है अथवा विलग्न?
"है बुभुक्षा" कौन पूछे?
"नटन है यह" कौन सोचे?
काल रात्रि घटाच्छटा सी!

घुटनों के बल गिरकर भिक्षा
माँगना नहीं इसका अर्थ?
प्रेक्षक गण को मोहित करना
नहीं, दिखाकर स्वांग अनेक।
एक पद विक्षेप इस ओर
एक पद विक्षेप उस ओर
क्षेप सत्वर से पदद्वय
एक सा है भासता, ध्रुव!
बार बार की मरोड़ से, कटि
रेखासी जो लक्षित है
शंकातंकित किसे बनाती
नहीं? किसे यह "नाटय" लगे?
घटाच्छटा सी कालरात्रि यह!

अहंकारमु लेदु लो लो
महर्णिटनमु मॉगमु चाटदु
महादेवा यभयमिड्डुमन
अभिनयानकु हस्तमे लेदु
रभसमुन दन मुंदु वॅनकल
प्रभल गलिपिंचु
प्रभलल्लो प्रभ निलुपनॅवरोयि
प्रभलल्लो प्रभ कलुप नॅवरोयि ?
कारु नल्लनि काळरात्रि !

अंतरतम में अहंकार की
नहीं भासती लघु रेखा ।
नट के मुख पर नहीं दीखती
महर्णटन की परिभाषा !
सृष्टि दीन बन महादेव से
अभय याचना करती है ।
किंतु व्यस्त हैं हस्त वे सभी
नहीं लक्षिता मुद्रा वह
अग्र दिशा की अति प्रभा से
पीछे की वह अमित प्रभा
नाट्य रभस में मिल जाती है ।
कौन प्रभा को थाम सके ?
महा प्रभा का साथ दे सके
और किसी की अन्य प्रभा ?
कौन कह सके लक्षित कर ?
घटाच्छटा सी कालरात्रि में
घटाच्छटा सी कालरात्रि यह ॥

कॉण्डवीटि पॉग मब्बुलु

मूल: श्री विश्वनाथ सत्यनारायण

1. दग्धांध्र राज्य नित्य विधूत धूममु
        वलॅ कॉण्ड बुरुजुल कॅलन लेचि
बुरुजु कॉम्मुल वीडि पोलेनि रॅड्ल की
        रिति वोलॅ पॅनुराव्ळ नतुकुलु पडि
रॅड्ल कंदा वॅन्क रेगु वंटिंटि पॅ
        न्पॉग वोलॅ गुमुरुलै मुंदु सागि
दाग्धावदांध्र स्वतंत्रता रम वोलॅ
        कॉण्ड लंटि यंटकुंड बोयि
श्यामली भवदूग्रास घासादनर्थ
मॉलयु वॅल्लावुल कदंबमुलुग निलिचि
कॉण्ड कॉम्मुलु लो दाचुकॉन्न क्रॉत्त
क्रॉत्त पॉग मब्बुललमॅ नी कॉण्ड कॉसल ॥

2. ऑक सारि वलिपम्मु चिलिकि मुत्याल यं
        चुल पोलिक नुपत्यकल चरिंचु
ऑक सारि जघन भागोपरि स्रस्त चे
        ल विधान गिरि मॉद्व्ळ बडिपोवु

कॉण्डवीडु के धूमिल जलधर

अनु: श्री सूर्यनारायण "भानु"

[कॉण्डवीडु आँध्र में रेड्डि राजाओं की राजधानी थी। रेड्डि राजाओं का आंध्र के इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। उसी "कॉण्डवीडु" की स्मृतियों का भावुक वर्णन इस कविता में प्रस्तुत है जो "आंध्र प्रशस्ति" नामक काव्य से उद्धृत है।]

1. दग्ध हुए उस आन्ध्र राज्य के सदा धूत उस धूम सदृश बन,
   नग के बुर्जों के पार्श्वों पर फैले हो कर,
   उसके शृंगों से लगी हुई रहनेवाली रेड्डि नृपों की
   कीर्ति सदृश बन चट्टानों पर चिपके होकर,
   रेड्डि नृपों की धर्मशाल की पाकशाल से छूट निकलते
   धूम सदृश बन उमड़ कर आगे बढ़ कर,
   त्वरित चाल से धाती जाती आन्ध्र जाति की स्वतंत्रता की
   रमा सदृश बन, नग-शृंगों पर छाते चढ कर,

   श्यामल तृण चय चरने फैली
   धवली धेनु-समूह सदृश बन
   गिरि शृंगों में अब तक छिपते
   जलधर फैले गिरिशृंगों पर ॥

2. किसी समय ये मुक्तांचल की झीनी घघरी जैसे बन कर
   तरल कान्तिमय तराइयों पर विचरण करते,
   कभी कभी ये सघन जघन के उपरि भाग से नीचे खिसके
   दुकूल जैसे गिरि मूलों पर दल कर गिरते,

ऑक सारिं गिरि लक्ष्मि मॉगमुपै मॉगलि पु
प्पोळ्ळदुकॉन्नट्लु चॅल्ल रेगु
ऑक सारि स्वेद बिंदुकमुलु रत्यंत
वेळा कुचावृत्ति विस्तरिंचु
चिरुत पॉग मब्बुली कॉण्ड सीम पलुच
बडि विशीर्णमै, धूतमै तडिसि, राच
सिरि युडिगि पोवनट्टि यी शिथिल दुर्ग
लक्ष्मि कॉन गूर्चु वॅरिं यलंकृतुलनु ॥

3. इड्डुपुल विलिखिंचिरेमॉ ना मुक्ताक्ष
रमुलुगा दुर्ग कुड्यमुल नॉलसि
इचट भ्रुगुलु पॅट्टि रेमॉ ना ग्लप्तमु
क्ता रेखगा गिरि स्थलमु मॅरसि
इट वितान ममर्चि रेमॉ ना मृदु मरु
च्चालित मध्यमै चदल दीर्चि
इट वेळकुळि वेट्टि रेमॉ ना तुदल शी
तल पृषत्परिषिंचितमुल गदलि
प्रातरनतिक्रमित याम भानु रोचि
रा समात्त धावळ्य मर्यादमैन
लेत यी पॉग मब्बु पुरातनंबु
लब्बुचुन्नदि रेइल यांध्र प्रशस्ति ॥

अन्य समय ये गिरि लक्ष्मी के मुख पर फुंके केतकी पराग
जैसे बन कर ठौर ठौर पर शोभा भरते,
कभी कभी ये काम केलि के अंत समय कुच-युग पर फैले
स्वेद-बिन्दु-से गिरिशृंगों पर फैला करते,
जीर्ण शीर्ण ये पगले जल धर
राजस खो कर गिरि सीमा पर
पड़ी शिथिल इस दुर्ग-श्री को
पहनाते हैं गहने भास्वर!!

3. दुर्ग-कुड्य पर दमके जैसे
मुक्ताक्षर वर हुए लिखित हों,
गिरि-स्थलों पर चमके जैसे
रंगवल्लियाँ हुई रचित हों,
पवनोच्चालित हो नभ फैले
जैसे वितान फैलाया हो,
शीतल जल-कण छिड़क कर निकले
ज्यों क्रीडा-सर बनवाया हो,
उषः काल की कलित कान्ति सम
शोभित ये सब नये घनाघन
बता रहे हैं आन्ध्र वीरवर
रेड्डि नृपों की कीर्ति पुरातन!

4. इवि रॅड्ल राजुल एदललो पूरिंचु
कोरानि कोर्कॅलु गुमुलु गट्टि
इवि तॅल्गु बंटुल यिंदुप गिंजलै
नात्मलु वीड लेकरुगु दॅञ्चि
इवियु श्रीनाथुनि ऍर्रप्रग्गड काव्य
तकु रानि भावमुल् तरक गट्टि
अवचि तिप्पय सॅट्टि विवि रत्नराशिगा
मलचिन प्राणमुल् मगिडि वच्चि
कॉण्ड वीटि पॉलाल् वीडि कोनुलेक
आश बलमुन मगुड्ड प्रेतात्मल वलॆ
सॉरिदि नी गिरि कॉम्मुल जुट्टु पट्ल
निट्टि पॉग मब्बुलै भ्रमियिंचु गाक ।।

5. ना प्राणमुलकुनु नीपॉगमब्बुल
केमि संबंधमो येनु गूड
पॉग मब्बुनै कॉण्ड चिगुरु कॉसल पैन
बुरुजुल पैन कॉम्मुलकु पैन
ब्रालिपोनो मध्य ब्रीलि पोनो नेल
रालि पोनो गालि तेलिपोनॉ
ना यूह चक्र सुंदर परिभ्रमणमै
यी पॉग मब्बुल ने वरिंचॅ
ऍन्नि पॉग मब्बु लॅरिगि ले नेनु मुन्नु
तूर्पु कनुमलु विडचु निट्टूर्पु लट्टि
विचटि यी पॉग मब्बुले यॅडद लोनि
ललितमु मदीय गीति नेला वॅलार्चु ?

4. रॅड्डि नृपों के हृदयों में ये
नहीं समाती इच्छाएँ हों,
आन्ध्र वीर वर धैर्य-सार ले
आश्रित उनकी आत्माएँ हों,
"श्रीनाथ" तथा "एर्राप्रॅगडा" के
काव्यावर्णित भाव-भार हों,
"अवचि तिप्पय्य" का लौटा यह
रत्न राशिमय प्राण-सार हो,
"कॉण्डवीडु' के कृषि-स्थलों पर
आवृत लोभी प्रेतात्मा ज्यों
क्रम से इन भूधर श्रृंगों पर
भ्रमण कर रहे धूमिल जल धर !!

5. जाने, ये क्यों सारे जलधर गले लगाते मेरे अन्तर
मैं भी ऐसा बादल बन कर गिरिशृंगों पर मीनारों पर
प्रसरित होऊँ गल ढल जाऊं तराइयों पर चढ़ बढ़ जाऊँ
वसुन्धरा पर खुद गिर जाऊँ वायु-वीचियों पर उड़ जाऊँ!
मेरी आत्मा परिभ्रमण कर
इन मेघों का रही वरण कर
ये ही मेरे प्यारे जलधर
जैसे लेते पूर्वी भूधर
लंबी श्वासा; ये वारिद, मन्दित
मेरे मन को करते स्पन्दित !!

मूग नोमु

मूल : श्री विश्वनाथ सत्यनारायण

1. बिय्यपु गिंजयन् चिगुरु पेडिन गंधपु पच्चिच बॉट्टु तो
तिय्यनि चिन्नि नी नॉसलि तीरुलु कुंकुम तीर्चि मुंगिलन्
तॉय्यलि नोमु चारिकलतो पस पाडिन मुद्दरालु नी
पय्यॅद व्राल नीवु नति पट्टिन दीवन लीय जूचॅडिनू ॥

2. नी तॅलि पट्टु चीर मॅयि नीडलु पारि मुसुगु संज क्रॉ
म्बूतल तॅल्ल ले मॉगिलु पेलिक वालिक गालि दूलि पो
नेत बॅडंगु कुच्चॅललु नीचिरुकाळुल मुद्दु तोचॅनो
लेत पॉराडु पय्यॅद चलिंचिन पच्चनि ताळि तोचॅने ॥

3. कम्मनिपाल बुग्गवबुगा ! पति कोसम इन्नि नोमुलन्
किम्मनकुंड नोचॅदवु केवल मातनि नीयॅडंद क्रॉ
न्दम्मि पुवुं दुमारमुलु दम्मिन चिक्कनि तेनॅ पाललो
चॅम्मट यूटलन् मॅदपि चेतुवॉ नेय्यपु तिय्यमुद्दगा ॥

मौन-व्रत

अनु : डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

[आश्विन कृष्ण अमावस्या से लेकर कार्तिक शुल्क पूर्णिमा तक विवाहिता बालिकाओं के द्वारा आंध्र में मौनव्रत रखा जाता है। व्रत रखनेवाली बालिका संध्या को स्नान करके तुलसी की पूजा करती है और सुहागिनों को कुंकुम का तिलक लगाती है। बाद में नक्षत्र दर्शन करके भोजन करती है। नक्षत्र दर्शन तक मौन रहने का नियम है। ऐसा विश्वास है कि यह व्रत रखने से विवाहिता का सुहाग अचल रहता है और उसे पति का अखंड प्रेम प्राप्त होता है।]

1. चंदन चर्चित चावल के दानों के सुंदर तिलक सुशोभित
   अपना भाल मधुर छोटा-सा कुंकुम की लाली से मंडित
   औ व्रत चिह्नालंकृत ले तू झुककर जब करती पदवंदन
   पल्ला खिसका पड़ता, देती सुहागिनी आशिष मन भावन ॥

2. सफ़ेद् रेशम की साड़ी तव देह कांति से भासित
   मानों स्वर्णिम संध्याभा से श्वेत मेघ हो सुविराजित
   हिलती प्यारी झीनी साड़ी की गोटें छोटे पैरों पर
   पीला मंगल सूत्र चमकता झीने कंधेले के अंदर ॥

3. कमल पत्र पर हिमबिंदु सदृश तुम पतिहित सब करती हो व्रत
   चूँ तक करती न कभी, सद्यो विकसित निज हृत्कमलांतर्गत
   मधु पराग से आच्छादित मधु गाढ़े प्रेम दुग्ध में निर्मल
   घोल चाहती करना उसको तुम मधुर सुगंध भरा कुड्मल ॥

4. ओसि मनोज्ञ नीरद नवोदय काल वियद् विलंबमा
नासित वारिवाह निवहानत कैशिक ! मूग नोमुलो
कोसलु तेरु कन् तुदल कूडिन भाग्यपुटॅर जीरलो
मासरमय्यॅ नी यॅडद मागिन नॅय्यपु तिय्यदॉन्तरल् ॥

5. पैदलि चालुलो व्रतमु पट्टिन नीकुनु तावॉसंगुमु
चैदुल काळ्ळ वंगबडि ताकक कन्नुल नद्दुवेळ नी
मीद सरागमाड पसिमीगड चूपुलु नव्वुपूलु
भावोदयमुन् पॉनर्चियु तलोदरि नीव्रतरक्ष चेसॅडिन ॥

6. कॉनलकु नूनॅ राचि कॉन गोळ्ळुल दुव्विन कॉण्डॅ चुट्ट चु
ट्टिन वदुलैन कॉञ्जॅड घटिंचिन यॅरॅनि पोक बंतितो
निनु नॅदुरैन कुंकुमपु नीट्टचु गुल्कॅड्डु मोमुकन्नॅ ने
मनि नुतियिंतु प्रातरमृताकृति कार्य फलोन्मुखत्वमुन् ॥

7. विनयमुनेर्चुको चदुव बॅट्टिटरि यैदुव लैन वारि द
र्शन सुकृतंबु नित्य परि संगति तॅच्चिचरि यिंत नुंडि मा
टनियम मभ्यसिंप कवटाकुनुनिन्नियमिंचिरीवुतॅ
च्चिचन पति शीलताधिकत चे तेलुगुल् परि पूतुलौटकुन् ॥

8. नी नडयाड्डु त्रोवलु पुनीतमुलैनवि नी दगंत रे
खा नत वायुवीचिकलनंत सुधा परि षेचन क्रिया
स्थानमुलैन वोसि पसिदान भवन्नियम प्रभावसं
धानमु चेत नी पति सुधा मय मूर्ति समुज्ज्वलिंचॅडिन् ॥

---

4. नील गगन में लटक रहे नव नीरद-केशों से तू शोभित ।
तेरे गूँगे व्रत में नेत्रों के अनियारे कोरक व्यापित
भाग्य लालिमा में हृदय छिपे प्रेम भाव की परतें नूतन
बढ़ती जातीं हैं अतिशय हो होकर, मधुर बना री जीवन ॥

5. नारी परंपरा में व्रत करती तुम सुहागिनी के चरणों पर
झुककर स्पर्श न कर जब प्रणाम करती उसके परिहासों पर
सस्मित झुकती लाज भरी चितवन औ झड़ते फूल मनोहर
तव व्रत रक्षा करते यद्यपि भाव उमड़ते जागृत होकर ॥

6. केशों में तेल लगाकर उनमें अंगुलियों का कंघा कर
गोलाकार ढीला केश बंधन कर उसमें फूल लगाकर
छोटे गेंदे लाल, भाल पर कुंकुम की लाली से भूषित
प्रातः सम्मुख आती, कार्य सफल, क्या ही शुभ शकुन प्रशंसित !

7. पाने विनय सिखायी विद्या, तुमको सुहागिनों के दर्शन
प्राप्त हुए री बेटी ! तुम तो कोमल पल्लव सम हो नूतन
अब वचनों का संयम पाने किया तुम्हें इस व्रत में दीक्षित
तुझ पति-शीला से अब होंगे आंध्र सभी पावनता भूषित ॥

8. तेरे चलने के पथ पावन वायु लहरें अनंत सुधा मय
नत चितवन की मुन्नी बिटिया ! तव व्रत प्रभाव की गरिमा मय
महिमा पाकर हो तेरा पति उज्ज्वल मूर्ति सुधामय ।
जीवन तेरा होगा सुखमय संसार बने सुंदरतामय ॥

शिशिर ऋतु

मूल: श्री विश्वनाथ सत्यनारायण

1. अह्म्मुलो चूचिनट्लु नेपाळपु
   कायलो तम चलिकंठ मरसि
   एप्पटि यत्तयो यिप्पुडे पग यट्टु
   लरकाळ्ळु चलिकाचुचटमटिंचि
   सगमु निदुरलेपि जननि यन्नमु पॅट्टु
   टॅरग काकलि यनि एड्चि एड्चि
   दुम्मु कोट्टुक तल दुव्विंचु कॉनकुंड
   नूरे गुटनु दिस्स यॉडलु पगिलि
   पट्टुकॉनि तल्लि संजल जुट्टु दुव्वि
   यॉडल नुनियराचि मैं गडिगिंत
   नावुलिंचुचु चेतुलंदॅ तूलि
   चिन्न बिड्डलु निदुरिंतु शिशिर वेळ ॥

शिशिर ऋतु

अनु. : डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. ज्यों निर्मल दर्पण में देखते हैं त्यों नेपाली-[1]
डिबिया में निज "चलिकंठ"[2] देखते देखते ।
[3]जाने कब आयेगी सास, वैर निकालने को
अभी से पैरों के तलुओं को सेंकते सेंकते ।
आधी नींद जगाकर माँ का अन्न खिलाना न
जान, भूख कह रोते भात माँगते माँगते ।
नंगा बदन, फटी देह और लिए बिखरे
बाल धूल सने गली गली भागते भागते ।
पकड़ शाम को लगा तेल, संवार बाल धो
बदन जल में माँ के तन पोंछते पोंछते ।
ले लेकर जंभाई शिशिर में माँ की गोद में
ही नींद लेते बच्चे शीघ्र ही ऊँघते ऊँघते ॥

---

1. स्त्रियों की कुंकुम, अंजन आदि प्रसाधन सामग्री रखने की छोटी डिबिया ।

2. गाती जैसा एक परिधान विशेष जो जाड़ों में बच्चे पहनते हैं और जो कंठ से लेकर पूरे शरीर को ढ़ंकते हुए लटकता रहता है ।

3. यह लोक विश्वास है कि सास और पतोहू में हमेशा छत्तीस का रिश्ता होता है और पतोहू सदा सास का अनिष्ट ही सोचती है । पैरों के तलुए सेंकना सास के लिए अमंगलकारी माना जाता है । अलाव के पास बैठकर जब बच्चियाँ अनजान में, ठंड से बचने के लिए, अपने तलुए तापती हैं तब बड़े लोग उनकी सास के अहित की बात कहकर उनको ऐसा करने से मना करते हैं । यह आंध्र में प्रचलित विश्वास है ।

2. उरमु गंधमु तोड नुदिकिन पाग तो
वेंचेसॅ नीट्टुगा पॅड्डिल पॅद्द
गुम्मु तप्पॅटलतो कॉम्मु बूरालतो
नॅलगोलु मेळम्मुलेगुदॅञ्चॅ
गॉड्डुगु नीडलतोड कुच्चु चॅप्पुल तोड
नडचि वच्चिचरि पॅण्ड्लि कोड्डुकु मडति
मुंत कॉप्पुल तोड विंत गंधमुलतो
वॅडलिरि नव्वुल पेरटाड्रु
पिन्न पालॅ गानि पॅण्ड्लि यूरेगिंपु
सागुदॅञ्चॅ रॅण्डु जामुलपुड्डु
अरुगु पैनि निडिन याकु वक्कलु गॉञ्चु
वीथि यॅल्ल नोड्डु विरिगि पोयॅ ॥

3. वृषभ राज विषाण कषर्णांकिताकाश
मुन वंक जाबिल्लि यनवसरमु
भूभृत्सुतातनू शोभा परीवाह
गति पिंड्डु मिन्नेरु गरुजुलेदु
भृंगिरिटेश कल्पित विभूतिविलेप
मुन वॅण्डि मल वॅलुगु पनिकिरादु
चक्षु श्रव शिरश्छवि मन्मणिच्छवि
च्छट तुम्मिपूल प्रसक्ति लेदु
चलि परिहरिंचुट प्रपत्ति कलुग जेय
कलुग चेसेड्डु स्वामि लोकमुल वांछ
चलि युषोवेळ निर्भय स्नातलकुनु
चलि बॅदरि गुंडियलु जारि चदिकिल बडॅ ॥

2. उर चंदन सिर पर धुली हुई पगड़ी
लेकर ठाठ से बारात का मुखिया आया।
तालियाँ पीटते और बजाते हुए सिंगियाँ
'हो हो' शोर मचाते दंगल का दल आया।
छाते की छाया में गुच्छेदार चप्पल पहने
दूल्हा दुलहिन को लेकर पैदल चल आया।
विचित्र जूड़ा बंधन औ' चंदन लेपन से
सज्जित हास्य वदन महिला दल आया।
छोटे चरवाहे की बरात का जुलूस चला
ऐसे, सुखद शिशिर वेला दुपहर की।
टूट पड़ी गली की गली लेते पान सुपारी,
ले मन में हर्षोल्लास, चबूतरे पर की ॥

3. वृषभ राज के विषाण घर्षण से अंकित
नभ में आवश्यक वक्र चंद्र रेखा नहीं।
पर्वत पुत्री के तन की शोभा के प्रवाह में
पूछ कभी स्वर्गंगा की कोई रहती नहीं।
[1]भृंगिरिटेश से रचित विभूति लेपन में
गिनती रजताचल की कोई रहती नहीं।
चक्षुश्रव के सिर पर शोभित मणि छवि में
'द्रोण' पुष्प की आवश्यकता रहती नहीं।
त्याग शीत का प्रपत्ति देता है लोगों को जब,
प्रभु-लोकों की अभिलाषा जब पैदा करता
उषोदय में निर्भय हो स्नान जो करते हैं
डर उनसे निस्तेज हो शीत भागा करता ॥

---

1. भगवान शिव के एक पार्षद का नाम।

किन्नॅर नृत्यमु

मूल : श्री विश्वनाथ सत्यनारयण

कॅरटाललो नुर्वु
तॅरचालुलो नीटि
पॉल जालुलो किन्नॅ
रट्ठु कदलि यिट्ठु कदलि
चिटि तरंगालतो पॉटि तरंगालतो
नटनालु मॉदलॅट्टिने कॉन्नीटि
तुटुमुला कदलाडॅने ॥

पुवु कन्नॅला जगा
रव नव्वुला वेल्पु
कव चिव्वला किन्नॅ
रट्ठु लूगि यिट्ठुलूगि

किन्नॅरा का नृत्य

अनु: डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

[किन्नॅरसानी गोदावरी की उपनदी है जिसे कवि ने अपनी कल्पना के द्वारा उद्विग्न हृदय पतिव्रता मुग्धा का रूप दिया है जो सास की निंदा से दुःखी होकर जंगलों में भाग जाती है। पति उसके पीछे पीछे जाकर उसे मना करते हुए उसका आलिंगन करता है। किन्नॅरा वहीं पिघल कर झरना बनकर प्रवाहित होती है। उसके नृत्यमय प्रवाह का प्रस्तुत कविता में चित्रात्मक वर्णन है।]

लहरों में
जल की धारों में
बिकल स्वरों में
हिल डुल इधर उधर
छोटी लहरों से
नन्ही नन्ही लहरों से
नाचती किन्नॅरा ॥

नव जल पुंज समान
लगी हिलने डुलने
पुष्प कुमारी सी
हास्य कुमारी सी
देव कुमारी सी
झूलती किन्नॅरा

चिट्टुलु कॅरटालतो
जव्वु जव्वुन नूगॅने वॅलि मल्लॅ
पुव्वु रुव्वुलु पोयॅने

चिरु गालि लो नूगु
कॉर वंपुलो नीट्ट
तरि तीपुलो किन्नॅर
रट्ट लेचि यिट्टु लेचि
जल्लु तुंपुरलतो कॉल्ल तुंपुरुलतो
मॅल्ल मॅल्लन नाडॅने कॅरटाल
जल्लु लो मुंचॅत्तॅने ॥

लघु लहरों से
चटकती किन्नॅरा
मटकती किन्नॅरा
झूम झूम उठती
घूम घूम चलती
बन श्वत चमेली
पुंज चली कर केली ॥

मंद पवन में
वक्र गमन में
मधुर झुमन में
झूल इधर
झूम उधर
उठी किन्नॅरा
लघु छींटों से
गुरु छींटों से
धीरे धीरे
खेली केली ।
लहर झड़ी में
बोर दिया है ॥

नडि नीटिलो मेलि
जड संदुलो नीटि
मुडि पॉन्दुलो किन्नॅ
रङ्ड पॉङ्गि इड्ड पॉङ्गि
रंगारु नललतो पॉङ्गारु नललतो
चॅङ्गु चॅङ्गुन दूकॅने - कॉङ्गॉत्त
सिंगारमुलु वॉलिकॅने ॥

सॉन जारुतू नीटि
पन वालुतू अंद
मुन सोलतू किन्नॅ
रङ्ड चॅदरि यिड्ड चॅदरि
चिन्नारि नडलतो - पॉन्नारि नडलतो
वन्नॅ वन्नॅलु पोयॅने किन्नॅरा
कॉन्नॅला तळुकॉप्पॅने ॥

धारा मध्य में
वेणी मध्य में
जलावर्त में
इधर उमगती
उधर उमड़ती
किन्नॅरा उछल
उछल कूदती
खेलती लहर से
उमड़ती लहर से ।
ढुलका पड़ता
नव नव शृंगार ॥

स्रोत से झरती
जलमयी बहती
सौंदर्य से शिथिल
किन्नॅरा बिखरी इधर
किन्नॅरा बिखरी उधर ।
चुन्नी की चाल से
मुन्नी की चाल से
अदाएँ दिखायीं
शशि कलाएँ सुहायी ॥

चिरु तेनॅला अच्च
रल गॉन्तुला गज्जि
यल मोतला किन्नॅ
रट्ठ मॉरसि यिट्ठ मॉरसि
गल गलारवळि तो जलजला रवळि तो
मॅल्लगा नुगाडॅने कॅरटाल
जल्लुगा मुसु रॅत्तॅने ॥

तॅग पाड्डुतु अंद
मुग नाड्डुतु तेनॅ
वग लोड्डुतु किन्नॅ
रट्ठ वालि यिट्ठ वालि
तळुकु वाकल तोड - वॅळुकु वाकल तोड
मलकलै नटियिॅचॅने - तॅलिनीटि
पुलकलै बुग्गॉत्तॅने ॥

लय पॅन्चुतू मध्य
लय दिंचुतू पाट
रय मॅन्चुतू किन्नॅ
रट्ठ सोलि यिट्ठ सोलि
वॅलि नीटि मेनितो - तलिराकु मेनितो

मधु भरे कंठ से
अप्सरा गान से
घुँघरू रवों से
किन्नॅरा गाती इधर
किन्नॅरा गाती उधर
झन झनाती किन्नॅरा
मंद मंद झूली।
लहरों की झड़ी-सी
उछली गिरी किन्नेरा ॥

खूब गाती हुई
नृत्य करती हुई
मधु अदाएँ लेती हुई
किन्नॅरा इधर झुकती
मस्त हो उधर झुकती
चमकते प्रवाहों से
दमकते बहावों से
बल खाती नाचती
पुलक बुलबुलाती किन्नॅरा ॥

लय बढ़ाती
लय घटाती
गान रय देखती
किन्नॅरा झूम उधर
मस्त हो झूम इधर
साफ़ जल देह से
मृदुल पल्लव देह से

ऑय्यारमुलु पोयॅने किन्नॅरा
अय्यारॅ यनिपिंचॅने ॥

थण थंगिणां दर्थो
गिण तक्किणां मद्दॅ
लल ओतलै किन्नॅ
रट्टु ओगि यिट्टु ओगि
चिरुवॅल्गु सोनलै सिरु लॉलकु सोनलै
मृदुतांडवमु चेसॅने वन वीथि
पदुपु पायलु कट्टॅने

अडविलो चिरु पाय
लै वाकलै सोन
लै जालुलै किन्नॅ
रट्टु प्राकि यिट्टु प्राकि

नाज़ नखरे दिखाती
किन्नॅरा
वाह वाही पा गयी
धण धंगिणां
धधों गिण तक्किणां
बनकर मृदंगरव
इधर बजती
उधर बजती
किन्नॅरा झलकते
स्रोत बनकर
स्रोत श्री बने
तांडव मुदुल करती
वन मार्ग में कई
धारें बनकर बही ॥

वन में छोटी
धारें बनकर
निर्झर बनकर
सोते बनकर
किन्नॅरा रेंग इधर
रेंग उधर

दि॰्य नृत्यमुलतो दि॰्य निःस्वनमुतो
दिग्दिगंतमुलंटॅने - सुर नदी
दीप्ति दिक्कुल चिम्मॅने
जिलुगु टंदियलतो
वॅलदि किन्नॅर सानि
पलु त्रोवलुग बोयि
तॅलि पूल तेनॅ वाकलु वारगा चेसि
तॅनुगु वागै पारॅने - नेत्तावि
वॅलुगु पाटलु पाडॅने

दिव्य नृत्यों से
दिव्य निःस्वन से
दिग्दिगंत में फैली
आशाओं में
देव नदी की
भा बिखरायी !
चमकीले नूपुरों से
नाज़ भरी चालों से
राग भरी गतियों से
नारी किन्नॅर सानी
अनेक मार्गों जाकर
कुसुम मरंद बहाकर
बही वन आँध्र निर्झर
आँध्र-सुगंधित गाये
गाने मधुर मनोहर ॥

चॅरुवु मॅट्लु

मूल : श्री अडिवि बापिराजु

चक्कनि चिन्नदि चुक्कल राणि
पाट पाडुतू पडति निलिचिनदि ।
तॅल्लनि चीर मॅल्लनि नडका
मॅल्ळो हारं तॅल्लनि पूवुलु || चक्कनि चिन्नदि ||

बिंदॅ बुजान संदॅ नीटिकै
चॅलों कलुवलु नल्लनि कन्नुलु || चक्कनि चिन्नदि ||

कंठ मॅत्तिनदि कलचु पाटलवि
पाटलु पाडुतु पडति निलिचिनदि || चक्कनि चिन्नदि ||

चॅरुवु मॅट्लपै चॅलिय निलिचिनदि
बंगरु नीटिलो प्रतिफलिंचिनदि || चक्कनि चिन्नदि ||

संदॅ चीकटिलो चक्षुलु कलिसॅनु
एरॅनि पडमट इंति वॅनुकने || चक्कनि चिन्नदि ||

पाटे भामै भामे पाटै
पाटा भामा पडमटि रंगै
बंगरु नीरै पॉङ्गॅडि प्रेमै
चॅरुवु मेट्लपै चित्रालैरी || चक्कनि चिन्नदि ||

तालाब की सीढ़ियाँ

अनु : डॉ. पी. आदेश्वर राव

सुन्दरी बन तारों की रानी
गीत सुनाती खड़ी हुई है ।
सफ़ेद साड़ी, धीमी पद्-गति
हार कण्ठ में, उजले फूल ॥ ॥ सुंदरी ॥

लायी घट सन्ध्या जल भरने
कुमुद ताल में, काली आँखों ॥ सुंदरी ॥

कण्ठ खोलती - दुखद गीत वे
गीत सुनाती युवती खड़ी है ॥ ॥ सुंदरी ॥

ताल-सीढ़ियों पर खड़ी सखी
प्रति बिम्बित सोने के जल में ॥ ॥ सुंदरी ॥

सन्ध्या के तम में नयन मिले,
सखि-पीछे पश्चिम की लाली ॥ ॥ सुंदरी ॥

गीति युवती बन, युवती गीति बन
दोनों बन पश्चिम की लाली
सुवर्ण जल बन, प्रेम-बाढ़ बन
ताल-सीढ़ियों पर चित्र बने ॥ सुंदरी ॥

वरद गोदावरि

मूल : श्री अडिवि बापिराजु

उप्पॊङ्गि पोयिंदि गोदावरि तानु
तॆप्पुन्न यॆगसिंदि गोदावरी
कॊण्डल्लॊ उरिकिंदि कोनल्लु निंडिंदि
आकाश गंगतो ह्स्तालु कलिपिंदि । ॥ उप्पॊङ्गि ॥

अडवि चेट्लन्नीनि जडललो तुरिमिंदि
उल्लु दण्डलु गुच्चि मॆळ्लोन तालिंचदि ॥ उप्पॊङ्गि ॥

वड्डुलतो सुडुलतो गरुबाल नडलतो
परवळ्ळु तॊक्कुतू प्रवहिस्तु वच्चिंचदि ॥ ॥ उप्पॊङ्गि ॥

शंखालु पूरिंचि किन्नॆर्ल मीटिंचि
शंकराभरण रागालाप कंठियै ॥ ॥ उप्पॊङ्गि ॥

नरमानवुडि पनुलु शिरमॊग्गि वणिकेयि
करमॆत्तिदीविंचि कडलिके नडिचिंदि
उप्पॊङ्गि पोयिंदि गोदावरि तानु
तॆप्पुन्न ऍगसिंदि गोदावरि ॥ ॥ उप्पॊङ्गि ॥

बाढ़ में गोदावरी

अनु: डॉ. पी. आदेश्वर राव

उमड़ उठी है गोदावरी!
लहर उठी है गोदावरी!!

पहाड़ों में दौड़ पड़ी है, घाटियों में भर गयी है।
नभ-गंगा के हाथों से हाथ मिला आगे बढ़ी है॥ ॥ उमड़ ॥

वन के विटपों को उसने वेणी में पिरो लिया है।
गाँवों के हार गूँथ कर उन्हें गले में पहन लिया है॥ ॥ उमड़ ॥

तीव्र वेग में आवर्तों से, गर्वीली चालों से
उच्छृंखल दौड़ लगाती बहती बहती आती है॥ ॥ उमड़ ॥

शंखों में नाद फूँककर, किन्नरियों को झंकृत कर
शंकराभरण का मधुर राग मृदुल कण्ठ में भरकर॥ ॥ उमड़ ॥

मनुज मात्र के सभी कार्य शीश झुकाकर काँप गये,
हाथ उठा आशीश बहुत दे जलधि-ओर वह चली गयी॥

उमड़ उठी है गोदावरी!
लहर उठी है गोदावरी!!

वीणावति

मूलः बॉड्डु बापिराजु

(बेलूरि चॅन्नकेशवालय शिल्पमुललो)

1. इट्टुले एन्नि शताब्दमुल् गडिचॅ तन्वी! नीवु मंदाकिनी
नटदूर्मिस्वन मोहनंबयिन वीणादंडमुंबूनि? चॅ
क्किट लेयॅण्ड चॅमर्चॅ, नद्दुकॉनबोकॅ केशवस्वामि के
मट्ट विनिर्पिंतुवु—ए सखीमिथ्याकोप संदेशमुल्?

2. भवती! युष्मदतीन्द्रियाद्भुतसुख प्रस्तावि वीणासमु
द्भव संगीतसुधा प्रवाहमुल नार्द्रस्वान्तुलौ वेल्पुलॅ
अविकल्पस्थिति शिल्पमूर्तुलयि युन्नारिन्दु काकुन्न, ई
पवनांकुरमुलंदु नॅच्चटि वपूर्वस्वर्ग सौरभ्यमुल्!

3. सकलकळाजगद्विभव शारद वो? विकसद्वसन्तचं
पक सुकुमारि ए नृपकुमारिकवो? स्थिरशिल्प योग सा
धकुनि हृदन्तरामृतनिधानमुनं दुदयिंचि नट्टि मे
नकवो? कानिचो निजमु नाकवितारस राज्य लक्ष्मिवे!

4. ए ललित स्वरम्मु निनर्दिचिन दा चिरुमोवि, सोग के
न्नालिन चूड्कि ने सॉगसु पंडिन, दा मृदुलांगुळीसं
स्फालनमंदु ए मधुर भावमु तोचिनदप्पुडाकळा
शालि पसिंडि पोगरकु शाश्वतमै अदि निल्चु मायॅदन!

5. स्पंदिंपन् रसहृद्विपंचिक पुरावाल्लभ्यविस्फूर्ति, आ
क्रंदिंपन् परतंत्रमौ ब्रदुकु; कर्णाटांध्र कन्यामणी
सौन्दर्यम्मुलु संगमिंचिन भवत्सान्निध्यमं दॅव्वडा
नंदोन्माद विषाद भावनललोनै अश्रुवुल् राल्पडो!

वीणावती

अनुः डॉ. पी. आदेश्वर राव

(बेलूर के चॅन्नकेशव-मन्दिर की शिल्प-मूर्तियों में जो बहुत ही प्रसिद्ध हैं।)

1. तन्वी! ऐसे ही बीत गयी हैं शताब्दियाँ कितनी तुम्हें
मन्दाकिनी-नर्तित-उर्मि-स्वन-मोहन वीणा लिए हाथ में?
कपोल मृदुल रश्मि प्रस्वेदित, यदि पोंछ लो तो कहो, केशव—
स्वामी को कैसे सुनाती तुम सखि,प्रणय-मान का संदेश?

2. हे भवती! वीणा से निकले तुम्हारे अतीन्द्रियाद्भुत, सुखद
संगीत-सुधा-प्रवाह से आप्लावित होकर यहीं देवगण
निश्चल स्थिति में शिल्प-मूर्तियाँ बनकर बस गये, नहीं तो इन
अनिल-वीचियों में प्रकटे कैसे अपूर्व स्वर्गों के परिमल?

3. तुम सकल कला-जगद्विभव की शारदा हो? या विकच वसन्त-
चम्पा-सुकुमारी कौन राज कुमारिका हो? स्थिर शिल्प-योग-
साधक के हृदन्तरामृत-सागर में जनमी मेनका हो?
नहीं तो निश्चित तुम मेरी ही कविता-रस-राज्य-लक्ष्मी हो!

4. जो ललित मधुर स्वर निकला उस सस्मित मुख से! जो शुभ्र
फूटी सुदीर्घ नत चितवन में! उस मृदुलांगुली-स्फालन में
जिस मधुर भाव का स्फुरण हुआ तब शिल्पी की स्वर्णिम टाँकी
के अन्तर में!— वह शाश्वत हो रह जाता हमारे हृदय में।

5. रस-हृद्वपंचिका स्पन्दित होती वल्लभ की अतीत-स्मृति में,
आक्रन्दन करता पारतन्त्र्य का जीवन, कर्नाट-आन्ध्र की
कन्याओं के सौन्दर्य-संगम तव सान्निध्य में कौन नहीं
अश्रु बहाता आनन्दोन्माद-विषाद-भरे-भावाप्लावित॥

6. नीकु शिला प्रवासिनिकि निद्दुर दॅल्पि, अनंत यौवन
श्री कमनीयमूर्तिग रचिंचिन शिल्पिमहेन्द्रु डिप्पुडे
लोकमु लेलुनो मरि यॅरुंगमुगानि, तदीय कीर्तिगा
धाक्रुतु लालकिंतु मनुनापभरम्मुन नीविपंचिकन् ।

7. एन्नेळ्लन्त तपस्सु चेसितिवॉ शिल्पी ! इट्टि पाषाणमुल्
वॅन्नामीगड लौचु नीकरमुलन् विन्नाणमुल्
कन्ने यानियंत सन्नसन रेखल् एद्दुलु कैसेसिना
वन्ना ! वीणिय पैनि तंत्रुलवि यल्लल्लाडुनो गालिकै !

8. कलगीतिन् प्रवहिंचु नॅन्तदनुकन् कावेरि, गोदावरी
जलमुल् तेनॅल सोन लॅन्तदनुकन् सर्वप्रपंचुम्मुनं
दल ए योक्कडॅ कानि युंडिननु सौन्दर्याचुकं, डी महो
ज्ज्वल सृष्टि गनि पल्कडॅ नमोवाकम्मु शिल्पि प्रभू !

9. मा तॅलुंगु शिल्पुल यशो महति मॉरयु
नी पवित्र कळाक्षेत्र मिचटॅ निलिचि
पाडु कॉन्दुओ देवि ! त्प्रतत्प्रतिभ जगज
गालकु विनबड युगयुगालवरकु ॥

---

6. शिलाप्रवासिनी ! तुम्हें जगाकर अनन्त यौवन शोभा की
कमनीय मूर्ति के स्रष्टा शिल्पि-महेन्द्र अब करता होगा
जाने किन-किन लोकों का शासन, तव विपंचिका में उसकी
कीर्ति-कथा के गीतों को सुनते हम दब अनुताप के भार ॥

7. शिल्पी ! कितने वर्ष किया तप तुमने ! ऐसे पाषाणों ने ॥
बनकर नवनीत त्वदीय करों में दिखा दिये कैसे कौशल !
कलाधन ! बनायी कैसे तुमने नयन-अगोचर रेखाएँ !
लो ! वीणा की मृदुल तंत्रियाँ हिल-हिल जातीं मलयानिल में ॥

8. बहती जब तक कावेरी कल-कल रव से, बहती हों जब तक
गोदावरी मधुर धाराएँ, रहता हो सौन्दर्योपासक
यदि कोई इस जगती-भर में, तो हे कलाधनी ! यह उज्ज्वल
सृष्टि देखकर नतमस्तक हुए बिना वह रह सकता कैसे !

9. आन्ध्र-शिल्पियों की यश-महिमा
से मुखरित पावन कलाक्षेत्र ;
यहीं खड़ी गाती हो देवी !
जगती में सुन पड़े युगों तक ।

दीपम्

मूल : श्री नंडूरि वेंकटसुब्बाराव

आरि पेयवॅ दीपमू !
यॅलुगु लो नीमीद निलपलेने मनसु !
आरि पेयवॅ दीपमू !

जिम्मुमंटा तोट सीकटै पोवालि
सीकट्लो सूडालि नी कळ्ळ तळ तळ्लु ।

आरि पेयवॅ दीपमू !
यॅलुगुलो नी मीद निलुपलेने मनसु
आरि पेयवॅ दीपमू !

तळुकुलो नी रूप तलुसुकॉनि तलुसुकॉनि
सीकट्लॉ नाकळ्लु सिल्लुलड सूडालि
आरि पेयवॅ दीपमू
यॅलुगुलो नी मीद निलुप लेने मनसु
आरि पेयवॅ दीपमू

सूपुले आपेसि रूपु ऊसे मरिसि
वॉक रॅरुग किंकॉकरु वॉरिगि निद्रोदामु
आरि पेयवॅ दीपमू
येलुगु लो नी मीद निलपलेने मनसु
आरि पेयवॅ दीपमू !

दिया

अनु: डॉ० इ. पांडुरंगा राव

दिया बुझा दे प्यारी !
मन अपना मैं टिका न पाता तुझ पर इस उजियारी में ।
दिया बुझा दे प्यारी !
घुप घुप कजरी घनी अंधेरी छाने दे फुलवारी में,
चमक दमक तेरे नयनों की देखूँ उस अंधियारी में ।
दिया बुझा दे प्यारी !
मन अपना मैं टिका न पाता तुझ पर इस उजियारी में
दिया बुझा दे प्यारी !
उसी चमक में तेरी सूरत बार बार मन पर उभरे
अंधियारी में देखें छिद् छिद् मेरे नैन उमंग भरे ।
दिया बुझा दे प्यारी !
मन अपना मैं टिका न पाता तुझ पर इस उजियारी में ।
दिया बुझा दे प्यारी ॥
पलकें बंद किए तज चितवन छवि की सुधि बिसराएँ ।
बेसुध मैं तुझ पर तू मुझपर ! झुक करके सो जाएँ ।
दिया बुझा दे प्यारी ॥
मन अपना मैं टिका न पाता मुझपर उजियारी में ।
दिया बुझा दे प्यारी ॥

नमिलि मिंगिन ना यॅङ्क्

मुलः श्री नंडूरि वेंकटसुब्बाराव

यॅङ्क् वॉण्टि पिल्ल लेदोय् लेदोय्
यॅङ्क् ना वॉङ्ककिंक रादोय् रादोय् ॥

मॅळ्ळो पूसल पेरु
तल्लो पूवुल सेरु
कळ्ळॅत्तिते सालु
कनकाभिसेकालु

यॅङ्क् वॉण्टि पिल्ल लेदोय् लेदोय्
यॅङ्क् ना वॉङ्ककिंक रादोय् रादोय् ॥

सॅक्किट सिन्नी मच्च
सॅपिते चालदु लच्च
वॉक्क नव्वे येलु
वॉज्जिर वॉयिड्रालु

यॅङ्क् वॉण्टि पिल्ल लेदोय् लेदोय्
यॅङ्क् ना वॉङ्ककिंक रादोय् ॥

पदमु पाडिंदंटॅ
पापालु पोवाल
कतलु सॅप्पिंदंटॅ
कलकाल मुंडाल

यॅङ्क् वॉण्टि पिल्ल लेदोय् लेदोय्
यॅङ्क् ना वॉङ्ककिंक रादोय् रादोय् ॥

पुनिया मेरी निगल गयी जो

अनु: डॉ० इ. पांडुरंगा राव

पुनिया जैसी छोहरिया तो कहीं नहीं है, कहीं नहीं है।
पुनिया मेरी मुझे कभी फिर नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी ।।

छाती पर कंठी गुरिया की
बालों में गूँथे फूल।
पलक उठाकर देखा तो
हो सोने की बरसात।

पुनिया जैसी छोहरिया तो कहीं नहीं है, कहीं नहीं है।
पुनिया मेरी मुझे कभी फिर नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी ।।

तिल छोटा है कपोल पर
कहते बनता नहीं लाख पर
बस एक मुस्कुराहट ही सुन
हज़ारों वज्र वैदूर्य की।

पुनिया जैसी छोहरिया तो कहीं नहीं है, कहीं नहीं है।
पुनिया मेरी मुझे कभी फिर नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी ।।

कभी कभी पद गाती है तो
पाप दूर हो जाएँ।
कभी कहानी कहती है तो
जुग जुग तक रह जाए।

पुनिया जैसी छोहरिया तो कहीं नहीं है, कहीं नहीं है।
पुनिया मेरी मुझे कभी फिर नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी ।।

तोटंता सीकट्लॅ
दोड्डी सीकटि मयमे
कूटी कॅळिते गुंडॅ
गुबगुब मंटा बयिमे
यॅङ्कि वॉण्टि पिल्ल लेदोय् लेदोय्
यॅङ्कि ना बॉङ्कर्किक रादोय् रादोय् ॥
रासोरिंटि कैन
रंगु तॅच्चे पिल्ल
ना सॉम्मु ना गुंडॅ
नमिलि मिंगिन पिल्ल
यॅङ्कि वॉण्टि पिल्ल लेदोय् लेदोय्
यॅङ्कि ना बॉङ्कर्किक रादोय् रादोय् ॥

अँधियारी सारी बगिया में
पिछवाड़ा भी तममय है
जीमन को चल पड़े उधर तो
धक धक खाता दिल भय है
पुनिया जैसी छोहरिया तो कहीं नहीं हैं, कहीं नहीं है ।
पुनिया मेरी मुझे कभी फिर नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी ॥
शान बढ़ाती, रंग चढ़ाती
राजा के भी रंग महल में
पुनिया मेरी निगल गई जो
मेरा धन मेरा दिल पल में
पुनिया जैसी छोहरिया तो कहीं नहीं है, कहीं नहीं हैं ।
पुनिया मेरी मुझे कभी फिर नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी ॥

अतिथि

मूल : श्री दुव्वूरि रामिरॅड्डि

तॅरचि युंचितिनि जीवनमंदिर द्वारंबु
तीर्थवासी ! कॉनुमातिथेयसत्कारंबु
ओ यात्रिका ! नक्षत्रमंडलपथिका !
ए यज्ञातसागर शांत तट तरुवीथिन्
ए यानंदकूल समीरणशिशिरच्छायन्
एकाकिवै तिरिगितिवोयि ! निशामुखवेळ ?
ए यलौकिक मार्गसमुत्थितकांचनधूलि
नी जीर्णवस्त्रमिट्टु काविरि पट्टॅ बिकारि !
ए निगूढ विपंची रागमु विंटिवो गानि
ए चिन्मयानुभव स्वप्नमु गंटिवो गानि
इट्टु विहरिंचॅदु मुक्तपथंबुन नतिथी !

अतिथि

अनु: श्री के. वें. नृसिंह अप्पाराव

खोले रक्खा है यह जीवन - मंदिर - द्वार
तीरथ-वासी! ले लो आतिथेय - सत्कार ॥
तारा - मंडल - पथ में यात्रा करनेवाले!
एकाकी होकर तुम कहाँ घूमने निकले?
किस अज्ञात जलधि के तट पर प्रशांत वन में
किस आनंद - सरोवर - तट के शिशिर पवन में
रजनी-मुख में पथिक! घूम रहे हो अथक?
किस दिव्य-लोक-पथ की स्वर्ण-धूलि उड़ उड़कर
काषाय रंग लायी भिक्षुक! तव चिथड़े पर?
किस निगूढ़ वीणा का तुमने राग सुना है?
किस चिन्मय अनुभव का दिव्य स्वप्न देखा है,
जिससे घूम रहे हो अतिथि! मुक्त पथ में यों?

गरिक

मूल : श्री दुव्वूरि रामिरॅड्डि

दारि कोवल क्रेव तनरारु गरिक
यॅन्त मॅत्तंदन मॅन्तटि प्रोदि
यॅन्त क्रोत्तंदनमिगुरॉत्त नीवु
मॉन्नगा कुरिसिन मुत्याल जडिकि
मुरिपाल गुबुरुवै पॅरुगु चुन्नावॅ ।
दैव सृष्टिनि नीकु तावॉण्डु गलदु
नेनुनु नीपैन नॅन रूनि युंदु
एनु नीवैतिनो यॅवरिकिं दॅलियु
मुन्नु गतिंचिन पुट्टुवुलंदु
ईवु नेनैदुवो यॅवरॅरुंगुदुरु
राबोवु जन्मान राकपोकलकु !
गुस गुस चॅप्पॅदु गुनिसि याडॅदवु
नीलोन वॅलिगॅड्डु निर्मल ज्योति
वॅलिकॉत्त पोराट पॅट्टुचुन्नदियॉ
नीयंद चंदंबु नी संतसंबु
नंदु पालुगॉन नादु डॅन्द मुप्पॉङ्गु
पंच वर्न्न मुसुगु वलिपंबुक्रिंद
नॉक्क वेळ निरुवर मॉक्करमे येमॉ !

दूब

डॉ० कर्ण राजशेषगिरि राव

रास्ते के दोनों ओर खड़ी
जग में तू दूब! विलसती है।
कितनी कोमल कितनी गरिमा
नयापन ले तू विलसती है॥
परसों हुई मोती-झड़ी में
सुंदरतर बन तू बढ़ती है।
तुझपर मेरा स्नेह अनुपम
स्थिति तेरी जग में महती है॥
कौन जानता मैं ही तू हूँ
उन बीते मेरे जन्मों में।
तू स्वयं शायद 'मैं' बनी है
गमनागमन के इस चक्र में॥
काना-फूसी करती है तू
नाचती तू सदा रहती है।
जल तुझमें निर्मल ज्योति सदा
जो फूट निकलती आती है
बाहर आ कोई नव स्पर्धा
का जग में भाव जगाती है।
तेरे सुख शोभा - आभा में
भाग लेने मन उमड़ता है॥
पंचरंग झीने परदे में
हम दोनों क्या एक बने हैं?

सालीडु

मूल : श्री गुर्रं जाषुवा

1. नीलो नूलु तयारु चेयु मर गानी प्रत्ति राट्नंबु गा
   नी ले दीश्वर शक्ति नी कड्डपु लोने लीनमै युंडुनो
   ये लीलन् रचयिंतु वी जिलुगु नूली पट्टु पुट्टंबुलो
   सालीडा! निनु मोसगाडवनि विश्वं बॅल्ल घोषिंचॅडिन् ।।

2. ढ्क्कामल्लु पसंदु नेत पनिवांड्रा नी युपाध्यायुलि
   प्डॉक्कंडुन् गनराडु डागुकॉनि नारो? नीदु गर्भंबुन नं
   दिक्कालंबुन निन्नुमिंचु पनिवाडे लेडु दुर्वृत्तिकिन्
   दिक्कै नी यशमान कौशलमु व्यर्थी भूतमै पोयॅडिन् ।।

3. पुरुवुं गुंपुनु मोसपुच्चुटकु काबोलु् दॉङ्ग मग्गाल पै
   मुरिपॅम्पुं बनि युल्लि पट्टु बलिपंबुल् नेसि नी मंदिरां
   तर देशंबुन नार गट्टि यॉक पॉन्तं बॉच्चिनावोरि ट
   क्करि सालीडवु गावु दॉङ्गवनि वक्काणिंपवे लोकमुल् ।।

4. तलपं पुन्नमनाटि वॅन्नॅलल दिंङ्जालु नी नूलु पो
   गुल सिंगारमु जूडवच्चिच यलुवुल्गोल्पोयॅडिन् प्राणुलो
   तुलुवा! नॅत्तुरु द्रावु नेत पनुलॅन्दु जूड मोरंत प्रॉ
   द्दुलु नीकी युदरंभरित्व मनुकॉन्दुं पॅण्ड्लमुं बिड्डलुन ।।

5. ऑक पर्यायमु कांदिशीकुडगु वीरोत्तंसमॉक्कंडु कॉ
   ण्डकु नीवल्लिन गूटियंदॉदिगि युंडन् दायलेतिंचि नी
   मॉक मोटंबुन नम्मि नीदु निलयंबुन् दॉङ्गियुं जूड रिं
   दुकु निन्नु न्गॉनियाडि यीश्वरुनि वैदुष्यंबु यूहिंचॅदन् ।।

मकड़ी

अनु: श्री दुव्वूरि रामकृष्ण मूर्ति

1. तुझमें तो सूत कातने का कोई यंत्र या चर्खा नहीं
ऐसी शक्ति कुछ सर्वेश की लीन हो तेरे गर्भ ही है।
कौशेय वस्त्र औ सूक्ष्म सूत्र ये बना रही कैसे विचित्र!
री मकड़ी! छली कहकर तुझे करता यह जग सारा दूषित ॥

2. ढाके की मलमल जो बुनते क्या वे ही थे शिक्षक तेरे?
नहीं दीखता आज एक भी शायद छिपे हों गर्भ तेरे!
तुझसे बढ़ न कोई अब कुशल असमान तेरा कला कौशल?
आश्रय बुरी वृत्ति का लेकर हाय! हो रहा व्यर्थ निष्फल ॥

3. शायद कीड़ों के समूह को पकड़ मारने को ही ठगकर
जाली कर्घों पर कैशल से झीने झीने वस्त्र बनाकर
निज घर के भीतर फैलाकर सूखने, ताक में बैठी है
मक्कार! जगत कहे क्यों नहीं तू मकड़ी नहीं, चोर ही है ॥

4. पूर्ण चंद्रिका से जो बढ़ी तेरे सूत्र की साज सुंदर
हैं गँवाते अपने प्राण ही जीवधारी देखने आकर
यह बुनावट ख़ून चूसने की नीच! कहीं दीखती भी नहीं
मानता हूँ पेट भरना ही तव पुत्र पत्नी परिवार है ॥

5. गिरि पर तेरे बुने जाल की आड़ में छिपा रहा सिकुड़कर
हार गया वीर बड़ा कोई, शत्रुजन तो आकर कहीं पर
जाल देख विश्वस्त हुए सब तव गेह में झांका तक नहीं
यह देख प्रशंसा कर तेरी प्रभु का आँक लूँ वैदुष्य ही ॥

स्मशानवाटि

मूलः श्री गुर्रं जाषुवा

1. ऍन्नो ऍड्लु गतिंचि पोयिनवि गानी यी स्मशान स्थलिन्
कन्नुल् मोड्चिन मंद भाग्युडॉक्डैनन् लेचि राडक्कटा
ऍन्नाळ्ळी चलनंबु लेनि शयनंबेतल्लुलल्लाडिरो
कन्नीटं बडि कागि वोयिनवि निक्कंबिंदु पाषाणमुल् ॥

2. आकाशंबुन गारुमब्बुगमुलाहरिंचॅ दय्यालतो
घूकंबुल् चॅरलाडसागिनवि व्याघोपिंचॅ नल्दिक्कुलन्
गाकोलंबुल् गुंडॅझल्लुमनुचुन्न गानि यिक्काटिलो
ना कल्लाडिन जाड लेदिचट सौख्यंबॅन्त कीडिंचुनो ॥

3. इच्चोट ने सत्कवींद्रुनि कम्मनि कलमु निप्पुललोन गरिगिपोयॅ
यिच्चोट ने भूमुलेलु राजन्युनि यधिकार मुॅद्रिकलंतरिंचॅ
यिच्चोट ने लेत यिल्लालि नल्ल पूसल सौरु गंग लो कलिसि पोयॅ
यिच्चोट नॅट्टि पेरेन्निकं गनुगॉन्न चित्र लेखकुनि कुंचि नशिंचॅ

इदि पिशाचमुलतो निटलेक्षणुड्डु
गज्जॅ कदलिंचि याडु रंग स्थलंबु
इदि मरण दूत तीक्ष्ण माहष्टुलॉलय
नवनि भाविंचु भस्म सिंहासनंबु ॥

4. मुदुम तमस्सु लो मुनिगि पोयिन कॉत्त समाधिपै
बॉदलु मिणुगुरुं पुरुवु पोलिक वॅलुगुचुन्न दिव्वॅ आ
मुदमुडिपोयिनन् समसि पोवुट लेददि वीसमंदु मा
हृदयमु ह्रुग्गि निल्चि चनियॅन् गत पुस्तक ये यभाग्युय वो ॥

श्मशान

अनुः श्री दुव्वूरि रामकृष्ण मूर्ति

1. कितने ही वर्ष व्यतीत हुए इस मसान के अवनिखंड में
   हाय! उठ कोई नहीं आता मूँद चुका नेत्र जो अभागा,
   कितने दिनों तक यह चिरशयन? बिलख उठी हों कौन मातृजन?
   डूबकर जल में आँसुओं के तप्त हुए सच खंड शिला के ॥

2. घिरी घन घोर घटा गगन में खेल विनोद प्रेत उलूक में
   मचा काकोल रोर चहुँ ओर दिल धडकता, पर दिखता नहीं
   स्मशान में पत्र स्पंदन कहीं, सुख चैन रमता कितना यहाँ!

3. सुलेखिनी किस सत्कवींद्र की गयी अग्नि में पिघल यहाँ की
   राजमुहरों का किस भूप की न जाने हो चुका अंत यहाँ।
   अल्प आयु की किस तरुणी की हुई सुहाग भेंट गंगा की
   ख्याति प्राप्त किस चित्रकार की कूँची विनष्ट यहाँ हो चुकी ॥
   रंगमंच है यहाँ जहाँ रुद्र नाचता है नूपुर बजाकर
   साथ, भूत पिशाच समूह के मरण दूत यह, जो तीक्ष्ण दृष्टि
   चलाकर राज करता भू पर बैठकर भस्म सिंहासन पर ॥

4. निबिड तम मग्न नव समाधि पर संचरित खद्योत सम दीपक
   जल रहा हो गया यद्यपि परिसमाप्त तेल उसका।
   क्या उसे, जो बुझता है नहीं, कहें दीप! नहीं वह हृदय है
   रखकर निज कोई अभागिनी हाय चल बसी गत पुत्र हो।

5. कवुल कलालु गायकुल कम्मनि कंठमुली स्मशानपुं
गवनुल द्रॉक्कि चूचॅडि नॉका नॉक नाडल काळिदास भा
रवुल शरीरमुल् प्रकृति रंगमुनंदिपुडॅन्त लेसि रे
णुवुलयि मृत्तिकं गलिसॅनो गद कम्मरिवानि सारॅ पै ॥

6. आलोकिंचिन गुंडियल् गरगु ना या पिल्ल गोरीललो
ने ले बुग्गल सौरु रूपरियॅनो? ये मुद्दु निद्रॅञ्चॅनो
ये लीलावति गर्भ गोळमुन वह्नि ज्वाल जीविंचुनो
या लोकंबुन वृद्धि गादगिन ये ये विद्यलल्लाडुनो?

7. इट नस्पृश्यत संचरिंचुटकु तावे लेदु विश्वं भरा
नटनंबुल् गबळिंचि गर्भमुन विन्यस्तंबु गाविंचि यु
त्कटपुं बॅब्बुलितोड मेकनॉक प्रक्कं जेर्चि जोकोट्टि यू
रट गल्पिंचु नभेद भावमनु धर्मं बंदु गाराडॅडुन् ॥

5. हाय ! लेखिनियाँ कवि जनों की, मधुर कंठ गायक समूह के
इस श्मशान के नगर द्वार पर किसी न किसी दिन चरण रखते ।
शरीर भारवि कालिदास के अब तो बने रेणु कितने से
प्रकृति रंग में मिले धूल से चढ़के चाक पर कुम्हार की ॥

6. देखने पर दिल पिघल जाते, जाने इन लघु समाधियों में
छवि मिटी किन नन्हीं गालों की, न जाने सो गया लाल कौन ?
गर्भ गोल में किस नारी के ज्वाला धधकती हो अग्नि की
कैसी कलाएँ तरसती हों इस भूतल, जो विकसमान हैं !

7. स्थान न यहाँ अस्पृश्यता को, सृष्टि लीला को निगल करके
गर्भ के भीतर न्यस्त करके साथ भयंकर महा व्याघ्र के
इक ओर बकरा खड़ा करके शांत करने को थपथपा के
व्याप्त है वह भाव अभेद का धर्म, है यही प्रवर्तित यहाँ ॥

कापु-पाट

मूल : श्री अब्बूरि रामकृष्ण राव

प्रेयसि ! लेचि रम्मु चिवुरिंचिन मावुल क्रिंद
शीतल-च्छायललोन यौवन-वसंत-शुभोदयमर्ध्य
नव्वुचुन् जेयिकि जेयि जेर्चि
पॅर चिंतनलन् मरपिंचु रागमुन् दीयुचु
वासनल् परिमलिंचॅडु चोटुलयंदु बोवगन् ॥

(2)

त्रालिन संजलन् मरलि वच्चॅडु गोवुल
पालु तीयगा दोलॅडु दाक
लाडुलुनु दुत्तलुनावल बॅट्टि
सिग्गुलन् सोलॅडु चिन्नदान !
यॅट्टु चूचिननॅव्वरु लेनि चोट-
नुय्यालल नॅक्कि यूग मनसय्यॅडु
नीवुनु नेनु वेडुकन् ॥

(3)

पाडुटकॉप्प वेनि
पडवल् नडिपिंचॅडुनेटिलोवले चूडगवद्दु
लेतमनसुल् तडि सेसॅडु चॅट्ल चालुनन्
गूडिन मेनुलानुकॉन कॉम्मलनाकुलु बोलॅ
नॉक माटाडक कुरुचुंदमनुवैन
पॉलम्मुल गट्टुनीडलन् ॥

जवान किसान का गान

अनु: श्री के. वें. नृ. अप्पाराव

(1)

प्रिये! उठो यह देखो किसलय रंजित रसाल वृक्षों की
शीतल छायाओं में फैली यौवन-शोभा वसंत की।
आओ इसके सुरभिल पथ में घूमें हाथ मिलाकर
भूलें अन्य विचार सभी हम प्रेम गीतियाँ गा गाकर॥

(2)

साँझ-समय घर लौटीं गायें दुहने जब तक समय न हो
तब तक रस्सी-कलश यहीं रख, चलें जहाँ पर निर्जन हो
और वहाँ झूले पर चढ़कर साथ साथ झूलेंगे हम
लज्जाशीले! बाले! मेरी वांछा यह है प्रियतम॥

(3)

गाने में मन नहीं लगा तो सरिता-पथ ही छोड़ चलें
क्योंकि यहाँ पर चलती है नित लहरों की लय में नावें
तरुण चित्त पर करती छाया खेतों की मेंडों पर
चुप बैठेंगे वहाँ शाखके पत्तों-से देह सटाकर॥

अप्राप्त मनोहरिकि

श्री अब्बूरि रामकृष्णराव

1. ओनवनीत कोमलवयोरुचिरांगि ! यनुग्रहिंपु प्रे-
मानुमितास्मदीयवचना वळुलन्, भवदार्द्रराग स-
न्मानितुडैन यी कविकुमारुनि पल्कुलु नीमनोज्ञ ने-
त्रानुगताच्छशोभनमु लेंदुकॉनं दलॅत्तवेनियुन ॥

2. चीकटि दारुलंदु विकसिंचिन वॅन्नॅल वोलॅ तीव्र बा-
धाकुलु लैन वारलु सुधासरसिं गॉनु स्नानमट्लुश्या-
माकृति दाल्चि नादु हृदयम्मुन निल्चिन दिव्य राज्ञि ना-
कै करुणिंचि नी तनुविकासमु निंपुमु ना मनम्मुनन् ॥

3. मोमुन मोमु जेर्चि निनु मुद्दिड कोरिक लेदु नीदु व-
क्षोमृदु शय्य पैनि शिरसुन मॅड वालिचि व्रेलु मल्लिका
दामसुवासना मधुरतल् परिकिंपग गांक्ष लेदु ना
प्रेमकु दारि चूपग वरिंचिति ना यलरिंचु नॅच्चॅली ॥

4. म्लान मतिन् दृगंचलमुलन् दॉलकाडॅडु नी मनोज्ञतल,
लोन नडंगु नश्रुवुललो तडुपन् दलपॅट्ट बोक वै-
ज्ञानिक साधु भाषणमुलन् दनियिंपुमु नन्नु नामदिन्
लीनवु कम्मु नन्गवुगलिंपुमु नी कमनीय शोभ चे ॥

अप्राप्त मनोहरी को

अनु: श्री के. वें. नृ. अप्पाराव

1. नवनीत कोमले! हे बोले नव वयोरूप शुभशीले!
नव राग पूर्ण मेरी बातें कृपया निज अंतर भरके।
कवि कुमार यह बोलेगा जो भवदीय प्रेम मानित हो
यद्यपि वे बातें तक सुंदर नेत्र कांति के तुल्य न हों॥

2. पूर्ण चंद्र की धवलकांति ज्यों विकसी अंधेरे पथ पर
तप्त जीवका मज्जन का सुख हो जैसे सुधा सरोवर
श्यामा की शुभ आकृति धर त्यों मम हृदय राज्य-रानी हो
कृपामयी! आ मेरे मन, निज तन की कांति दायिनी हो॥

3. मुँह से मुँह लगाकर चूमना नहीं चाहता मन तुमको
तव उर की मृदु शय्या पर सिर रखे मल्लिका परिमल को
हरने की भी चाह नहीं है, है यह इच्छा सखि! केवल
प्रेम मार्ग में पथ दर्शक हो मुझे रिझाओ तुम पल पल॥

4. नयनाचल में नव विलास जो नाच रहे तव मनोहरी!
उनको उदास मनके आँसू न भिगोयें मम कृशोदरी!
विज्ञानात्मक सौम्य वचन में मेरे मनको बहलाओ
तव आभा का आलिंगन दो मेरे मन में मिल जाओ।

ऍवरु

मूल : श्री देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री

ऍवरोहो, ईनिशीथि
नॅगसि, नीडवोल्ल निलिचि
पिलुतुरॅवरो, मूगकनुलु
मोयलेनि चूपुलतो
ऍवरोहो
ऍवरोहो
इपुड़ा ननु पलकरिंतुरु
मोयलेनीरव गळ
मुन जलिंचु कोरिकतो
इपुडा ननु पलकरिंतुरु
ऍवरनि यी रेयिनिदुर
हृदय मदर, वेयि चेयि
चाय लाड पॅनु चीकटि
सैगलतो नाकन्नुल
रक्त मुरल लागिकॉन्दुरु
ऍवरो ना हृदयनाळ
मेला तुनियलुगा ना
निर्जीवपु जीवितम्मु
निट वदुलुदुरा
ऍवरोहो
ऍवरोहो

कौन

अनु: श्री सूर्यनारायण "भानु"

अहे कौन? अहे कौन?
इस निशीथ में उड़ते
छाया जैसे बढ़ते
मूक झुके नयनों से
कौन मुझे पुकारते?
अहे कौन? अहे कौन?
उफ! ऐसी वेला में
टेर रहे कौन मुझे?
नीरव ग्रीवा में अब
झुलती चाहों से सब,
टेर रहे कौन मुझे?
कौन इसी निशीथ में
निद्रा में दिल दहले,
शत हस्तों की छाया
नाच उठे, रक्त ढले
मेरे नेत्रांचल से;
गहरे अंधेरे के
काले संकेतों से
कौन खींच लेते हैं?
कोई यह हृदय नाल
खण्डित कर जाते क्या?
जीवन निर्जीवन कर
यहाँ छोड़ धाते क्या?
अहे कौन? अहे कौन?

आमॅ कन्नुलु

मूल : श्री देवुलपल्लि वेंकटकृष्ण शास्त्री

आमॅ कन्नुल्लो ननंतांबरंपु
नीलि नीडलु कलवु
विनिर्मलांबु
पूर गंभीर शांत कासार चित्त
हृदयमुल लोनि गाटंपु निदुर चाय
लंदु नॅड नॅड भ्रम्मुः
संध्यावसान
समयमुन नीप पादप शाखिकाग्र
पत्र कुटिल मार्गमुल लोपल वसिंचु
इरुल गुसगुसल् वानिलो निपुडु नपुडु
विन बड्डुचुनुंडु :
मरि कॉन्नि वेळलंदु
वानकारु मब्बुल मेनि वन्नॅ वॅनुक
दागु बाष्पम्मु लामॅ नेत्रमुललोन
बॉन्चुचुंडुनु
एदियो अपूर्व मधुर
रक्ति स्फुरियिंचु कानि अर्थम्मु कानि
भाव गीतम्मुलवि........ ।

उसकी आंखें

अनु: श्री हनुमच्छास्त्री अयाचित

अनंत नीले अम्बर की हैं
छायायें उसकी आंखों में ।
कहीं कहीं निर्मल जलपूरित
अगम सरोवर के अन्त में,
निहित प्रसुप्त प्रगाढ़ छायाएँ
परिलक्षित होतीं दृग-सर में ।।

सन्ध्या की वेला में आकर
उनमें समय समय पर अक्सर
नीप वृक्ष की डार पात के
वक्र मार्ग में गुंफित तम की
फुसफुसाहटें सुन पड़ती हैं ।।

और किसी वेला में वर्षा के
मेघों की अरुण नीलिमा के
पीछे अवगुंठित बाष्प बिंदु
ताकते हैं नेत्रयुग में ।।

कोई ऐसी अपूर्व विचित्र
मधुर रक्ति के झिलमिल
पर समझ न आनेवाले
भावगीत वे ।।

उर्वशी

मूलः श्री देवलपल्लि वेंकट कृष्ण शास्त्री

1. मुनुकॉनु वेकुवन् मॉगिडिपोवु नुलूकविलोकनम्मु मा
यनि विकच प्रभात रुचिरामर कांतिकि नप्सरः स्मिता
नन विधु सौध माधुरिकि ना प्रियुरालिकि नंधकार लो
कनिवसनान मेनिडि नगल् तॉडि चंपिन नूरकुंदुना ।

2. आपगरानि यीसु हृदयम्मु दहिंपग कंठमॅत्ति या
शा पटली श्रवोवितति जाटिति " और ! प्रभात शैल सा
नूपल नील पाळिकल नॉत्तकये स्रवियिंचु ना हिमा
नी पर गायनी गळ विनिस्सृत माधुरि मंटि कीड्तुरा ?

3. " ए मृग तृष्णनो वलचि एड्चॅदु नी दुर दृष्ट जीवन
प्रेममु नी एडंद कॉस रॅक्कल केनियु नंदरानि स्व
र्गामृत नंदन प्रसवमर्घ्य गदा ? वॅदुकाड बोयॅ दे
ला मिहिका मृषा पदमुलं " दनि रंदरु नव्वुलाड्डुचुन् ॥

4. ए मुदि कोर्किनो वलपॉकिंचुक लेनि कवुंगिलिंतलो
नीमृत मृत्तिका हृदयुली शिल लीड्तुरु धूलि बट्टि ; बा
धा मृदुलम्मुलौनॉ, निशित प्रमद क्षुभितम्मु लौनॉ ; ए
लो मसनालकुं गडलि लोतुल तावुलु मिंटिपूवुलुन् ?

5. प्रेयसि सोयगम्मुनकुलेदु शरीरमु ; लेदु मेनु ना
तीयनि प्रेमकेनि ; कलदे यॅड बाटिक माकु ! श्याम वै
हायस वीथि कार्तिकिक हसितम्मु वोलॅ लो
बायद्दो वॅलुंगो, मधुवासनयो ब्रतुकंतनिंडगा ॥

ऊर्वशी

अनु: डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. भोर के समय निमीलन शील दिवांध उलूक लोचन
यदि निर्मल-प्रभात-रुचिरामर-रागारुण-कांति अयन,
अप्सर: स्मितानन, विधु पियूष माधुरी मम प्रिया को
मारें, मौन रहूँ क्या, भूषित तम से कर काया को?

2. ईर्ष्या ज्वलित हृदय से मैंने दिशापटल गुंजित कर
कहा, "हाय! सूर्योदय के पहले ही विगलित होकर
बहती हिमानी पर-गायनी की कंठ माधुरी को
धूल में मिला भेंट करेंगे क्या पाताल पुरी को?"

3. कहते सभी, "किसी मृगतृष्णा से प्रेम कर हो दुखित
तव प्रेम अभागा हृदय-पंख छोरों को भी अलभित
स्वर्गामृत नंदन प्रसून, क्यों ढूँढ़ रहे पादों में
जो हिमसम मिथ्या है," यह कह हँसते हैं बातों में ।।

4. प्रेम रहित शुष्कालिंगन में बूढ़ी इच्छा कोई
मृत्तिका-हृदय निकालते शिलाएँ धूल में सोई,
जाने पीड़ा-मृदुल बनें या प्रमद-क्षुब्ध हो जायें,
स्मशान में सागर गहराई, गगन कुसुम क्यों आयें?

5. लावण्य प्रिया का सशरीर न, देह रहित प्रेम मधुर
मेरा, तब क्यों हो जायें हम विरह जनित दु:खातुर?
शारद रात्रि सम हसित कोई ज्योति न छूटती हृदय
कोई मादक इच्छा जीवन को करती है मधुमय ।।

पल्लकी

मूल : श्री देवुलपल्लि वेंकटकृष्ण शास्त्री

प्राणसखुडॅ ना कोसमै पंपिनाडु
पल्लकी अन हुदयम्मु जल्लुमनियॅ ;
वीडनि वियोगमुन वेगु ओडुमेनु
तलिरु तोरणमै सुमदाम मायॅ ॥

चॅदरु चेतुल नॅटो कइसेसुकॉण्टि
मॉयिलु वसनम्मुलो प्रॉद्दु पॉडुपु नगलॉ
एदॉ कालुचु हायियो, एदॉ तेल्चु
भारमो येमॉ सैरिंपनेरनैति ॥
कॉसरु नडल तूगाडुचु कुरुचुंटि
पूल पल्लकिलो पूलमाल नेनु !
'ओ' यनग, नोहॉहो' यन बोयवाँडू
दारि बडि निल्चि चूचॅ नुरूर नाडु ॥
'ओ' यनग, "नोहॉहो" यन बोयवाँडु
वीटि वॅलुपल मेल्कॉनॅ तोट तॅरुवु
'ओ' यनग, 'नो हॉ हो' यन बोयवाँडु
तोट पॉलिमेर कालुव तॉनकॅ निदुर,

प्रणय वल्लकि पल्लकी ; प्रसवभर व
संत वल्लकि पल्लकी ; शक्र चाप
वक्र रेख पल्लकी ; मधुस्वप्न शाख
पल्लकी !

पालकी

अनु: हनुमच्छास्त्री अयाचित

मेरे लिए पालकी भेजी प्रियतम ने ही, यह सुनकर
सिहर उठा है विक्षुब्ध हृदय झंकृत हुई तंत्रियाँ बजकर।
चिर वियोग पीड़ित शुष्क देह नव पल्लव का तोरण बनकर
नव पुष्पों की माला बनकर हुई सुगंधित शोभित सुंदर ॥

कंपित कर को साध किसी विध मेघ-वसन पहने हुए
दिनकर की किरणों से रंजित गहने दमके नये नये
जाने यह सुख प्रेमिल है या है फिर ज्वाला का आधार
वहन नहीं कर सकता हूँ मैं उठते हैं जो इतने ज्वार ॥

मंदगमन से झूलती हुई मैं फूलों की माला जाकर
बैठ गयी पुष्प पालकी में, चले कहार "ओ हो हो" कहकर।
गाँव के गाँव लगे देखने सब खड़े होकर मार्गोपांत।
मार्ग बाग का जागा, उछली लहर नींद से उसके उपांत ॥

अमर प्रेम की कनक बेलि सी वासंती पुष्पों का हार,
इंद्र धनुष की टेढ़ी रेखा मधुर स्वप्न की शाखा,
चली पालकी जैसे चलती है अविरल सरिता की धार।
'हे पालकी! हो पालकी! हे पालकी!' का मधुर झंकार ॥

पॅण्ड्रिल कूतुरु

मूल : कॉडालि आंजनेयुलु

1. कनुगव तल्लिगारिडिन काट्ठकरेकल प्रेम वल्लिकल्
बॅनचि त्रपा प्रसून मधु लेशमुलन् मिळितंबुलैन वी
क्षणमुल निन्नॉरुल् गननि चंदमुनन् वरु गांचु नीकु यौ
वन मधुमास यामिनुलु प्राप्तमु लय्यॅड्डु गाक शीघ्रमे ॥

2. त्वादृश बालिकल् तलुपु दग्गर पाटलु वाड्डु पॅद्द मु
त्तैदुलु भर्त पेरडिगिनप्पुड्डु तीग यॅलुंगु मुग्धतन्
बेद् वडंग 'वंतु मन पॅण्ड्रिल कुमारुनि' दन्न नीदु ल
ज्जा दरहास चंद्रिकलु शास्वतमै वॅद जल्लु गावुतन्!

3. पगडपु मोवि कॅरपुलकु पैपयि दागुड्डु मूतलाड्डु ले
नगवु गुलाबि पू सरमुनन् विरि मल्लॅलु दापिनट्लु दो
पग पति युत्तरीयमु मधुपर्कमु केल ग्रहिंचि वॅण्ट जं
टग जनु नम्रभावमु लनारतमुन् निनु बाय कुंडुतन् ॥

4. पुनुगु जवादि तावुलु गुबुल्कॉनु नी पसुपुं बयंट कॉ
ड्गुन मुडिवैचि कॉण्टिगद कोमलि नी मगडिंक नॅट्लु चॅ
प्पिन नट्ले विनंगलड्डु पॅण्ड्लमु गीचिन गीट्ठु दाटडं
चुनु वदिनल् नगन् जुरुकु चूपुल जूचॅड्डु नीकु सौख्यमौ !

5. वेसंगि संदॅल विरि मल्लॅपूलु
परचिन मुत्याल पालकी लोन
नूरेगु नाटि नी युत्साह दिव्य
मधुर दृश्यंबुलु मरतुमे मेमु,
चुक्कल रथमुलो नॅक्कि वेंचेयु
ओक चंदमाम माकुन्नंतवरकु ॥

दुल्हिन

अनु: श्री एम. संगमेशम्

1. आँखों में काजल की सुंदर रेखा माँ ने जो दी थी
शोभित है उसमें प्रेमलता-त्रपा-पुष्प-मकरंदमयी ।
सब लोगों की आँख बचा उन आँखों से प्रिय की ओर
दृष्टि बढ़ाती तुमको शीघ्र तरुण मधुयामिनियाँ मिलें ॥

2. तेरी समवय बालाएँ और सुहागिन नारीगण
द्वार पर गाते जब पूछें 'प्रिय का नाम बताओ री!'
तब लज्जा मधु मुग्ध कंठ से "बारी उनकी है" कहकर
बचनेवाली तेरी स्मिति चंद्रिका चिरकाल खिले ॥

3. विद्रुम-से अरुणाधर से स्मिति आँख मिचौनी खेल रही
मानों गुलाब की माला में कुंद के पुष्प शोभित हों,
ऐसी शोभा ले नम्र बनी पति-वसनांचल हाथ लिए
चलनेवाली तुमको विनय संपदा न कभी छोड़ चले ॥

4. "मृगमद पंक सुगंधित वैवाहिक मधुपर्कांचल* में
पति को बाँध लिया है; अब वह तव आज्ञाकारी है ।
तेरी बात न टाले" भाभियों का सुन यह परिहास
तीखी नज़रों से देखनेवाली तुमको चिर सौख्य मिले ॥

5. ग्रीष्म दिवस की संध्या में फुल्ल मल्लिका शय्या शोभित
मोतियों की पालकी में बैठी तेरी जुलूस निकली
तेरी उस दिन की शोभा हम कैसे भूल सकेंगे
जब तक तारोंवाले रथ पर चाँद निकलता हमें मिले!

---

* विवाह के सिलसिले में वर को मधुपर्क खिलाने के बाद एक विशेष प्रकार के नूतन श्वेत वस्त्र जरी के और लाल किनारेवाले वर-वधू को दिये जाते हैं जो विवाह के पाँचों दिन वे पहने रहते हैं। उनको मधुपर्क कहते हैं।

जैलुलो चँदमामा

मूल: श्री कॉडालि आंजनेयुलु

चिंत शल्यावशिष्टये चिक्कि चिविकि
नवसिन मृगाक्षि स्विन्नाननम्मु दोचु
कृष्ण पक्षम्म ! नन्नी वॉकिंत मा ग
वाक्षमुल तॉङ्गि चूचॅडु पक्षमुननु
राति गुंडॅलु गलिगिन राजभट्टुल
कर्कशाघातमुल मेनु कंदि पोयॅ
शीतल हिमांबु कणमुल चिल्करिंचु
अमृत किरणाल स्पृशियिंपु मय्य मम्मु !

अकट ! मरियिंत कृशियिंचिनट्टि मेनु
सांध्य पवनम्मुलु स्पृशिंचि चाल नाळ्लु
गडचॅ, ज्योत्स्ना प्रसाद शीकर परंप
राभिषेकम्मु चेयिंपुमय्य माकु ॥

जेल में चांद

अनु: श्री एम. संगमेशम

जब कभी गवाक्ष से
थोड़ा मुझ बंदी को
झांकेगा असित पक्ष !
तभी याद आ जाती
दीन, मलिन, व्यथाक्लिन्न
खिन्न सती के मुख की ॥

नित राज सेवकों के
कठोर कशाघात से
श्लथ विश्लथ तन मेरा
चाँद, ज़रा स्पर्श करो
शीतल हिमबिंदुमयी
अपनी मधु किरणों से ॥

सांध्य समीर सुख स्पर्श
भूला हुआ कभी का
हाय, सतत कृशीभूत
होता जाता शरीर,
ज्योत्सना शीतल हिम का
स्नान कराओ सुधांशु !

तॅल्ल मब्बुल कॅरटाल तेलिपोवु
नट्टि भवदंतरिक्ष प्रयाणमु गन
इनुप तलुपुल नड्डुम वसिंचु माकु
नुल्लमू ानरंगाल नूगुचुंडॅ ॥

नव्य तारा पथम्मुल नडचु निन्नु
ने किराटाधिपतुलु बंधिंप गलरु ?
कष्टतर दीर्घ यामिनुल् गडचि वेग
बंधन विमुक्तुलनु जेयवलयु मम्मु ॥

बंधनाल यबाह्य प्रपंच वार्त
लितरमुलु माकु राकुन्न नेमि ? सुर व
धू कपोल कर्पूर मधुर परिमळ
पुलकित रहस्यमुल नॅल्ल दॅलिपि पॉम्मु ॥

नभ नील विहारी सित
मेघों में तव याता।
कारा के लोह द्वार
भीतर रहनेवाले
हमको भी तू लेकर
चलता है ऊहा पथ ॥

नव तारा पथ में तुम
स्वतंत्र जब चलते हो
वह राजा कौन तुम्हें
जो बाँध सके बंधन?
मेरी भी दीर्घ निशा
कष्टों की दूर करो ॥

कारा के बाहर की
बातें विदित न, तो क्या?
सुरांगना कपोल के
कर्पूर सुवासित पुलकित
रहस्यमयी बातों को
हमें सुना जाना तुम ॥

मुकुळितमुलैन कलुव पूवुल दळालु
नी कर स्पर्श पुल्करिंचिन विधान
ऍन्नडो मूग पडिन ना हृदय वीण
तीग लॉक सारि कदलि नटिंप दॉडगॅ ।।

अंबुदम्मुल नी कृपा पांग दृष्टि
पॉल्चि रत्नाकरुडु पॉङ्गि बोर्ल पडुनु
अट्टि नीकेड स्वादु भोज्यमुल केनि
नोचुकॉननि बंधितुनि संतोष मेड ?

क्षितिनि नी कॅट्टि मूर्धाभिषिक्तुडैन
नुलु पोगॉक्क टिच्चि संतुष्ट जॅन्दु
हर्ष मुक्ताश्रुल सुवर्ण हारमुलनु
गूर्चि ने निप्पुडर्पिंचु कॉण्टि नीकु ।।

जैसे नव किरणों से
खिलते हैं उत्पल दल
वैसे मम मूक हृदय—
वीणा भी अब तुम से
मुखरित हो आज मधुर
राग सुना देती है ॥

रत्नाकर भी तुम से
अंबुद सम कृपापांग
पा उछल उछल गिरता ।
ऐसे तुम कहाँ ? और
कहाँ अभागा मैं जो
भोजन स्वादिष्ट हीन ?

*महाराज भी तुमको
एक सूत का रेशा
देकर खुश होते हैं ।
फिर मैं क्या दे सकता
लो यह हर्षोपहार
स्वर्णिम मुक्ताश्रुधार ॥

*शुक्ल द्वितीया के चंद्रमा के दर्शन कर उसे सूत का रेशा अर्पित करने की प्रथा आंध्र में है ।

नीड

मूल : श्रीमती चावलि बंगारम्मा

अंदालु तान॑ चूसिंदि
नीटि चंदालु तान॑ चॅप्पिंदि
ना तोटि
वॉड्डुल मंदार वॉड्गि बॉट्टॅट्टुकॉनि
अंदालु तान॑ चूसिंदि

सॉगसॅल्लु चूसेनु सॉम्मसिलि पोयेनु
चॅट्लंटि पामुले चॅरुवॅल्लु पाकेयि
अंदालु तान॑ चूसिंदि ।

आविंतलूनि चूसिंदि
अप्पुडे आकाश मडलि पोयिंदि
गज गजा वॉणिकि ता गट्लपै कॉरिगिंदि
सूर्युडे चॅट्टॅक्कि चूड भय पड्डाडु
अंदालु तान॑ चूसिंदि

परछाईं

अनु: श्री सूर्यनारायण "भानु"

छवि निजी देखी उसीने
तरल जल पर थिरकती वह
छवि निजी कह दी उसीने !!
खड़ी मंदारिका तट पर
झुकी कुंकुम लगा लेकर
छवि निजी देखी उसीने !!

जो कि वह छवि देख पाये
सुध बुध को भूल जाये,
छुए पादप सर्प मानों
जलाशय में रेंग धाये !
छवि निजी देखी उसीने !!

जादुओं को देख पावन
गगन के मन
भीम भय का हुआ स्पन्दन !
झुक गया सो तभी अंबर
थर थराता किनारों पर
देखने को रवि गया डर,
छवि निजी देखी उसोने !

जुट्टॅल्ल विरियबोसिंदि
मंदार बॉट्टटट्टॅ चॅदिरि रालिंदि
गट्ल गुंडॅलु कलग, मॅट्ल कन्नुलु चॅदर-
वॉङ्गुन्न मंदार वॉङ्गिगये युंडि आ
अंदालु तानॅ चूसिंदि ।
ना तोटि
मंदार माटलाडिंदि ।

केश सारे दिये बिखरा ।
भाल कुंकुम खिसक छितरा ।
किनारों के सुमन टूटें,
सीढ़ियों के नयन फूटें,
झुकी मंदारिका यों
झुकी ही रह गयी त्यों !
छवि निजी देखी उसीने
की बात मुझसे मंदारिका ने ।

फलश्रुति

मूलः श्री नायनि सुब्बाराव

अंत श्रम पडि पावन मभ्रगंग
धारुणिकि तॅच्चिनाडु भगीरथुंडु
अंत मथियिंचि कलश रत्नाकरम्मु
अमृत भांडम्मु पडसिनारमरवरुलु ॥

मत्पुरानेक पुण्य जन्ममुलु पंडि
जाह्नवी स्वच्छवुनु सुधास्वादु मूर्ति
वैन नी दिव्य सान्निध्य मंदुकॉण्टि
पुडमिकिन् स्वर्गमुन कॉक्क मुडि रचिंचि ॥

इंत कालम्मुगा नाकहष्टमुलयि
ऍन्नि यानंद धाममुलीयनंत
भुवन संधुल भासिल्लु नवियु नेडु
मत्पदाक्रांतमुलु भवन्महिम चेसि ।

फलश्रुति

अनु: श्री दुव्वूरि रामकृष्णमूर्ति

करके भगीरथ बड़ा प्रयत्न कब से
लाया भूपर प्रपूत गंगा नभ से ।
करके अनथक मंथन कलशांबुधि का
प्राप्त किया अमरों ने पात्र सुधा का ॥

मम जन्म जन्मांतर कृत पुण्य फल से
भू गगन में एक गाँठ लगाने से
सुधा रस मूर्ति पावन गंगा जैसी
मिली मुझको तव दिव्य सन्निधि वैसी ॥

इतने काल तक मुझे अदृश्य हैं जो
बहु भुवन संधियों में आश्रित हैं जो
आंनदधाम हैं जितने, आज सभी
तव महिमा से मेरे स्वाधीन अभी ॥

मातृ गीतमुलु

मूलः श्री नायनि सुब्बाराव

1. ऍव्वडा क्रूर कर्मठुडॅवड्डु नील
जलद निर्मुक्त शैशिर शार्वरी प्र
शांत मलवाट्ठु पडिन निशांतमंदु
अकट नट्टिट दीपम्मु नार्पिनाडु ?

2. ऍव्वडा विरसात्मकुंडॅवड्डु सांध्य
राग मंजुल रेखा विराजमान
मंगळाकाश सीमंत रंग मंदु
कारु चीकट्ल रासुलु ग्रक्किनाडु ?

3. ऍव्वडा निर्दयस्वांतुडॅवड्डु नन्नु
गंटकनिगूढ विपिन मार्गमुल तल्लि
लेनि बिड्डनु गाविंचि मानसंबु
टासलन्नियु नडुगंट गोसिनाडु ?

4. नेनु जड बुद्धि नै सुंत नीदु पूज
कै वलयु वस्तुवुल् समायत्त परुप
मरचितिन यम्म ! नाकिट्टि मरुवरानि
शिक्ष घटियिंप नी कॅट्लु चेतुलाडॆ ?

मातृ गीत

अनु: श्री कोट सुंदरराम शर्मा

1. शिशिर के सुखशांत निशांत में
जब नहीं असितांबुद तूल भी
हाय, कांतिमयी गृह दीपिका
किस कुकर्मठ ने झट दी बुझा ?

2. हृदय में किसके विरसात्मता
भर गई है कि ऐसी सांझ के
सरस रंजित अंबरवीथि में
सघन घोर तमोऽबुंधि फेर दी ?

3. करुणालव हीन कौन हाय
मुझको मातृ विहीन कर गया ?
विपिन बीच कंटकों भरे
पथ में आशा काट डाली ?

4. माते ! मैं जड़ बुद्धि बना ही
तव पूजा हित सामग्री भी
नहीं सजायी, कैसा कुदंड
घटित किया ? कैसी निर्दयता !

5. एंत कालम्मु पट्टिनदे त्वदीय
पूजकै द्रव्यसंततुलु प्रोगु सेयु
समाप्ति लेदु तल्ली ! यिकॉक्क
वत्सरमैन नी बोर्पु बट्टलेदु ॥

6. इक ना जीवितम्मु नी स्मृतिकि चॅक्क
बडिन यॉक शासनम्मयि वरलु नटवॅ
चिन्नि नी विग्रहमु प्रतिष्ठितमु नादु
नंतरंगम्मु नीकु देव्यालयम्मु ॥

7. नीवु मडि गट्टु कॉनि पोयिनावु पंडलु
पुष्पमुलु पट्टुकॉनि देव पूज कॅटकॉ
नेनु नी कॉङ्गु बट्टुक नीदु वॅण्ट
बोवुटकु लेक कन्नीटि बॉट्लु राल्तु ॥

8. नीवु पोयिन दॅचटनो देवळंबु
ललित पूजा विधान संलग्न हृदय
वा विनिश्चल ध्यान समाधि यंदु
मरचि पोदुवॉ येमॉ नामाट तल्लि !

9. नेनु नीकन्न बिड्डनु निशितमैन
ना कडुपु मंट चल्लार्पु लोकनाथ
पाद कंज मरंद्म्मु चेदु कडुगु
प्रत्यहम्मुनु नीचनुबालॉसंगि ॥

---

5. वह एकत्रित करते करते
अत्यंत विलंब हुआ ही था ।
अभी समापन हुआ न उसका
तुम, माँ, रुक न सकी वत्सर भर ।।

6. जीवन अब मेरा तव स्मृति में
शिलालेख सा बन जायेगा ।
मेरे मन में जब प्रतिष्ठिता
तुम हो, देवी मंदिर वह मम ।।

7. तुम गयी पहन के धौत परिधान
फल फूल ले, कहीं देव पूजार्थ
साथ अंचल पकड़, चल न पाया
अश्रु मोचन के सिवा क्या करूँ ?

8. किसी देवकुल में गयी तुम, सुनिश्चय
वहाँ भव्य पूजा-विधा-लग्न-चित्ता
बनी, किंतु निश्चल समाधिस्थ होकर
कहीं भूल जाओ क्या बात मेरी ?

9. तव माते, तनुजात हूँ, अतः
हर लेना मम तीव्र दुख तुम,
प्रभु पादांबुज के मरंद की
कटुता तावक स्तन्य से मिटे ।।

ईप्सित लेशमु

मूल : श्री नायनि सुब्बाराव

1. अदि नडचु वेळ नेल जीराडु कुच्चॅ
रेपु दुम्मुन नॉक लस रेणुवुनयि
दानि तनुवुन बुट्टु स्वेदमुन गलसि
करगि पोदुनु रूपमेर्परुप राक ॥

2. अदि युषस्नान मॉनरिंचि यंत गट्टु
कॉनिन पच्चनि पट्टु दुकूलमंदु
आर्द्रमगु ले जरी यंचुनै तदीय
देहमुन गगुर्पाटुलु दिद्दुकॉन्दु ॥

3. अदि शुचिर्भूतयै देवतालि पूज
लैन वॅनुवॅण्ट तन पूत हस्तमंटि
हारतिकि वॅलिगिंचु कर्पूरमुनयि
वासनलु चिम्मुदुनु दानि वदन मंदु ॥

4. अदि सुधारस मॉलक माटाडुनपुडु
दानि नाभि मूलमुन नुद्गत मनोज्ञ
फणितुलंदॉक्क प्रणयभाषणमु नगुचु
लोवलो दानि रसन कंटुकॉनि पोदु ॥

5. प्रणयिनी वदनांचल भाग मंदु
नॉक्क चिरुनव्वु तरगनै यूगुचुंदु
प्रणयिनी शीतल दृगंत पातमंदु
करडु गट्टिन यॉक सुधा कणम नगुचु ॥
प्रणयिनी प्रसूनांग संस्पर्श तगिलि
तगुलनिविधान कलिगि नंतर्न यनंत
दिव्यराग स्रवंति लो तेलिपोदु ॥

अल्प इच्छा

अनु: डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. जब वह चलती तो ज़मीन पर लगती
साड़ी की गोटों से जो रज उठती
घुल जाऊँ एक उसीका कण बनकर
उसके देह-स्वेद में अरूप होकर ॥

2. उषा स्नान करके उसके धृत पीतांबर
की ज़री की भीगी किनारी बनकर
उसके शरीर में सिहरन बन जाऊँ
अपने को साथिक मान तृप्त बन जाऊँ ॥

3. उसके शुचि हो, देवों की पूजा कर,
अपने पवित्र कर कमलों से छूकर
आरती जलाने का कपूर बनकर
उसके वदन भरूँ मैं सुगंध मनहर ॥

4. जब वह बात करेगी सुधा उडेलती
तो उसके नाभि-मूल से उमड़ निकलती
बात प्रणय की बनकर मैं जाऊँ लग
उसकी जिह्वा पर, अपने उन्नति-मग ॥

5. प्रणयिनी के वदनांचल में मनोहर
रहूँ झूलता बन स्मिति की एक लहर
प्रणयिनी के कटाक्ष पात में शीतल
बन जाऊँ घनीभूत सुधा कण विमल ॥

6. प्रणयिनी के कुसुम शरीर का पाकर
कोमल सुखद स्पर्श लगा अनलगाकर
अनंत दिव्य राग की मधु सरिता में
बहते बहते तिर जाऊँ लवता में ॥

मुरली ध्वनि

मूल : श्री नोरि नरसिंह शास्त्री

मुरलि मुद्दिडु नी मोवि मुरुवु चूचि
तममु तॅर जील्चि प्रकृति चैतन्य मूनॅ
स्वरमु वॅलुवडिनंत गोपाल कृष्ण !
पुलकरिंचॅ बृंदावन पुण्यभूमि ॥

गोकुलमु विडि यरुदॅन्चॅ गोप जनमु
कुडुचु लेगल विडि वच्चॅ गोगणंबु
परुगु परुगुन नी पादपद्मु जेर
प्रियुनि विडनाडि वस्ति गोपी मनोज्ञ !

यमुनलो जेरु वारिलेशमु विधान
रागमुन नेकमैन स्वरम्मु रीति
तन्मयत चॅन्दि कल समस्तम्मु विडिचि
लीनमै पोति नी दिव्य गान सुधनु ॥

मुरली ध्वनि

अनु: हनुमच्छास्त्री अयाचित

वंशी का चुम्बन करनेवाले !
तुम्हारी मुख कान्ति निहार कर
निशीथ अवगुंठन को छिन्न कर
प्रकृति ने चैतन्य धारण किया
अमृतस्वर भासते ही ।

हे गोपाल कृष्ण !
बृंदावन की पावन धरती
पुलकित हो उठी ।
गोपजन गायों को छोड़
गायें निज बछड़ों को छोड़,
आयीं तेरी पगध्वनि सुनकर
गोपियाँ कर पतियों को त्याग ॥

यमुनाजल में लीन बिंदु-सी
राग में एक स्वर समान
तुम्हारी दिव्यगान-सुधा में
पूरी तन्मयता के साथ
सब कुछ तज कर मैं लीन हुई ॥

कृष्णवेणि

मूलः श्री नोरि नरसिंह शास्त्री

1. ई याषाढ़ नवांबुदार्भटुलतो
नेक श्रुतिं गल्पि तह्नी!
यी लीलग नित्य यौवन सुधा
श्रीराग मालापनल्
चेयं जालिति वॅन्निमारुलिटुल्लन्
जीर्णिंचु मार्बोट्लकुन्
प्रायं बिंत यिगुर्प नेरितिवॅ यं
बा! कृष्णवेणी नदी!

2 निन्ना मॉन्नटि दाक एंडबडि एं
ते जालिगा जालुगा
नुन्ना वोपिक लेक नाकुवलॅने
यॉक्कुम्मडिन् नेडु सं
पन्नात्मीय महाप्रवाहमुन सि
व्वालाडुचुन्नावु, ने
निन्नी नाडुनु बोलि पॉङ्ग गलनं
टे तह्नि कृष्णापगा?

कृष्णवेणी

अनु: हनुमच्छास्त्री अयाचित

1. ओ माते कृष्णवेणी नदी
आषाढ़ के नवल मेघ के साथ
अपनी मधुमयश्रुति जोड़कर
नित यौवनसुधा श्रीराग आलाप करती
किन्तु मात ।
क्या जीर्ण हो रहे हममें भ।
तुम यौवन ला सकी ? कभी नहीं ॥

2. कल परसों ही तुम आतप से
कृशीभूत दयनीय थीं ।
मेरी ही भाँति बहाने लगी जीवनधार
अकस्मात् आज इतना जलप्रवाह से
हो गयी तरंगित
पर क्या कृष्णे !
मैं भी हो सकता हूँ आज
यों तरंगित जैसे तुम हो ?

3. नी कूलंकष वाः प्रपूरमुन नॅ
न्ने बिंदुवुल् कल्गुनो
नीकन्नेळ्ळ वयस्सुलेदटवॅ वी
नि जूडु षट्त्रिंशकुन्
वाकल् कट्टुचु पॉङ्गि पॉङ्गि
मरलन् वर्षिंचु वर्षंबुनन्
नी कौमारमु चाटॅदे, यितडॉ
क्षीणिंचॅङ्गदे यप्पुडे !

4. नी कल्लोल कराब्ज संगतुल
वीनि दाकवे चल्लगा
मैं कौगिंटनु मुंचि तॅल्पवॅ त्वदं
भ श्शीकरा सार धा
रा केलिं दनियिंपवे श्रवणमुल्
गांधर्व संपत्ति चे
ना कौमारमिगुर्चि निल्पगदॅ
कृष्णा मात जन्मांतमुन् !

---

3. इस अथाह जलप्रवाह में
जितनी भी जल की बूँदें हैं
उतनी उम्र तुम्हारी कृष्णे !
मैं केवल छत्तीस वर्ष का,
तुम हर साल तरंगित होकर
जीवन का कौमार्य ग्रहण करती हो ।
और साथ ही साथ यहाँ मैं
क्षीण हो रहा प्रतिपल प्रतिक्षण ॥

4. अपने हस्ततरंग कमलों से,
मेरा भी तो स्पर्श करो न,
शीतल जल धारा क्रीड़ा में
मुझको भी निमग्न करो न ।
तुम्हारी गान्धर्व संपत्ति से
मेरे श्रवण तृप्त हो हो कर
नयी कोंपलें छोड़े नित
और स्वयं जीवन के अन्तिम
क्षण तक यह कौमार्य अचल रहे ।

आराधना

मूल : श्री वेदुल सत्यनारायण शास्त्री

आमॅ नवनीत हृदय, नायॅतरंग
शांति देवत, आशा पथांतराळ
पारिजातम्मु, प्रेम जीवन विभात
कैशिकी गीति, ना तपः कल्प वल्लि ॥

आमॅ जगदीश मकुटाग्र सीमनुंडि
उर्विपै जारिन सुधा मयूख रेख,
आमॅ मूडु लोकाल कल्याणमुनकु
अवतरिंचिन यॉक पवित्रानुभात्र
मामॅ ना जन्म-जन्म पुण्यमुलु पंडि
प्राप्तमैन केळी परित्याग लील
आमॅ पद सन्निधान दिव्यस्थलान
भक्ति नम्रडनै निलबडिन यपुडु
तलपुनकु वच्चु ना पेदतनमु नाकु ॥

*　　*　　*

आराधना

अनु : डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. नवनीत हृदया शांति-देवी
   वह मेरे अंतरंग की ।
   आशा-पथ-पारिजात, प्रेम-उषा
   का वह थी गीत कैशिकी ॥

2. कल्प-वल्लिका थी वह मेरे
   जीवन के अखंड तप की ।
   जगदीश मुकुट से पृथ्वी पर
   झरती किरण सुधाकर की ॥

3. त्रिलोक कल्याण को अवतरित
   एक अनुभाव पवित्र वह
   मम जन्मांतपुण्य प्राप्त फल
   केलि-त्याग-लीला थी वह ॥

4. उसके चरणों के पास खड़ा
   होता भक्ति नम्र मैं जब
   स्मरण दीनता का अपनी हो
   आता है मुझको झट तब ॥

* * *

" చెలియ ! ఏ దేవి మంగళాశీస్సుమములు
పరిమళించినవో మన శిరములందు
ఆఁక తపస్సిద్ధి వోలె నేటికి లభించె
నిరువురి మనోరథమ్ముల ఫలము " ॥

అనిన తారళ్య విస్తారితాక్షియగుచు
స్వామి ! మన తోటలో ఈ వసంత వేళ
పూచిన సుమమ్ములా దేవి కొఱకె
అనుచు నాచేయి తన చేత నదుము కొన్న
యామె పద సన్నిధాన దివ్య స్థలాన
నాక కల్లోలినీ పద న్యాసమునకు
దరవినత మైన హర జటాభరమువోలె
నతుడనయ్యు మహామహోన్నతి వరింతు ॥

5. जाने किस देवी के आशीः
 सुमन सखी ! देते सिर परिमल
तपसिद्धि सम आज मिला एक
 दोनों के मनोरथों का फल ।

6. यह सुन विस्फारित तरल नयन
 बोली, "हमारे उपवन में
उस देवी की पूजा-हित ये
 फूल खिले वसंत समय में" ।

7. यह कह उसने हाथ लिया था
 मेरा अपने कर में जब ।
दिव्य स्थान में उसके चरणों
 के पास लगा मुझको तब ॥

8. देव नदी चरण विन्यास के
 हित नत शिव-जटा भार समान
नत होकर भी मैंने पाया
 उसमें दिव्य औन्नत्य महान् ॥

विहग गीति

मूल : श्री वेदुल सत्यनारायण शास्त्री

सॉगसुल पुट्टलो एगिरॅडि पिट्ट !
दिगि रावॅ थॉक मारु दिवि नुंडि भुविकि
जनुलन्न भयमो यसह्यमो नीकु
अड्डगु सव्वडि इंत यालिंचि नंत
अंदाल नी रॅक्क लाडिंचु कॉन्चु
नॅचटिको ऍन्दुको यॅगिरि पोयॅदवु
निनु वॅम्बडिंप ना मनसौनु गानि
वायु विमानंबुना एमि नेनु ?

अल युषोधर हास कलश वारासि
वॅलि दम्मिमै तूर्पु विकसिंचु नपुड्ड
चॅट्टु कॉन कॉम्म कॅञ्जिवुरु जॉम्पाल
दागि विप्पॅदवु नी रागाल गॉन्तु ॥

मातृ देवत कंठ मधुर स्वरम्मु
नी गॉन्तु लो मारु म्रोगुनो एमॉ
मोदान नुप्पॉङ्गि पोकु नॉ एडद
चवुलूरु नी पाट चॅवि सोकिनंत ॥

नडिमिंटि संद्रान पडव चंदान
तीरैन रॅक्कल तॅर चापलॅत्ति
गालि कॅरटाललो तेलि पोयॅदवु
ई स्वेच्छ यी धैर्य मेद्लब्बॅ नीकु ?

विहग गीत

अनु: चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. उड़ते विहंग लावण्यमयी !
   एक बार उतरो भूपर ।
   लोगों से डर है क्या कि घृणा
   झट उनका आहट पाकर ?

2. सुंदर पर फड़का पता न क्यों
   कहीं तुम जाते उड़कर
   मन होता तव अनुगमन करूँ
   क्या मैं विमान हूँ ! कह, पर ॥

3. हास्य उषा का श्वेत कमल बन
   पूर्व दिशा में विकसित हो जब
   वृक्ष शिखर पल्लव पुंजों में
   छिप खोलते कंठ सराग तब ॥

4. गूँजता क्या मातृ देवी का
   तेरे स्वर में कंठ मधुर ?
   फूला न समाता मैं सुनकर
   तेरा गाना कर्ण मधुर ॥

5. नभ सागर में नाव सदृश तुम
   पंखों की पाल चढ़ाकर
   तैर वायु लहरों में जाते
   यह स्वातंत्र्य मिला क्यों कर ?

ఎత్తున కొంసగి పర్వేతడి వెళ
ఎయెండ కాచునో యె వాన పడ్డునో
యె మౌదువో పాప మీంచు నేను
దిగులెత్తి మోగమెత్తి వగతును గాని
బడలవు నీ తల్లి కడుపు చల్లనగ ॥

రె సతి తల విరబోసి కొన్నపుడు
నీ తల్లి రెక్కల నీడలో నోదిగి
కుదురుగా నిద్రవోయెదవు కాబోలు
పగటి పూటనే కాన బడుదు వెల్లపుడు!

జీవితమ్మున చీకుచింతలు లేని
నీ హాయి యెల మానిసికి లేదాయె
నను చింత నిను చూచినపుడు నా కొదవి
యంతయు మరచి యె కొన్త సెపైన
ఆడుచు బాడుచు హాయిగా యింట
నీవలె తిరుగాడ నె నెన్తు గాని
లేవు రెక్కలు నాకు లేదు సాహసము ॥

6. ऊपर उड़कर जब दौड़ रहा
होता तू नील गगन।
ऊपर मुँह उठा देखता मैं
दुख करता मन ही मन ॥

7. सोचता, धूप होगी, वर्षा
होगी, क्या हो तेरा।
पर शिथिल न तू, 'जीते रहना'
यह कहता मन मेरा ॥

8. माँ की पर-छाया में दुबका
सोता तू, निशा-सती जब
बालों को फैला लेती है।
दिन में ही मिलता तू तब ॥

9. देख तुझे मेरे मन आता
जो सुख मिलता जीवन में
चिंता रहित तुझे, प्राप्त नहीं
वह नर को विश्व भुवन में ॥

10. सब कुछ भूल चाहता, क्रीड़ा
करते गाते तेरे सम
स्वच्छंद विहार करूँ, लेकिन
पर नहीं, साहस भी न मम ॥

అంది యందని జీవితావధులందు
పురుగట్లునెలపై తిరుగాడు నాకు
ప్రాసించునా యంత పాటి భాగ్యమ్ము ?
కావున నో విహంగమ యొక్కమాట ॥

नरु लंदरलु स्वार्थपरुलनुकॉनक
परहिंस कलरॅडि वारनुकॉनक
कवि हृदयाल रागमु श्रुति कल्प
दिगि रावलयु नीवॅ दिवि नुंडि भुविकि ॥

---

11. जीवन की अपूर्ण छोरों में
    रेंगता भू कीट समान ।
    प्राप्त मुझे कब होगा वैसा
    अनूपम सौभाग्य महान ?

12. इसीलिए विहंग, मेरी एक बात सुन लो ।
    दुनिया में सब लोगों को स्वार्थी समझ न लो ।
    पर-हिंसक मत समझो, कवि-मानस-रागों से
    स्वर संगति करने भू पर आ तू मेघों से ॥

आवृत्ति

मूल : श्री वेदुल सत्यनारायण शास्त्री

आ प्रशांत निशा जठरांत मंदु
कलत निद्दुरलो कलल्गांचुचुन्न
गौतमी नदि ना मनोगत विषाद
तममु नंतयु तन लोन दाचुकॉनियॅ ॥

आ नदी सैकतमुल नायडुगु जाड्
चॅरिपि वेयग वॅनुवॅण्ट नरुगुदॅन्चु
गालितरगल चल्लनि कडुपु लोन
कन्नु मूसॅनु नायूर्पु गाड्पुलॅल्ल ।

चॅड्डयो मंचियो महा सृष्टियंदु
जरुगु विषयंबुलनु तटस्थमुग ना य
नंत गगनमुनंदुंडि यरयुचुंडु
तारलॅ मदश्रुकणमुल नेरु कॉनियॅ ॥

ने नॅ मिगिलिति नी गौतमी नदी प
विलगर्भंबुलो स्रोत पॅद्दुचुन्न
युग युगांतर विश्व महोग्र दुःख
जीव गीताल कावृत्ति चॅप्पिकॉनग ॥

(दीपावली से)

आवृत्ति

अनु : डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

उस प्रशांत निशा के गर्भ में
कच्ची स्वप्निल निद्रा निद्रित
नदी गौतमी ने छिपा लिया
विषाद्-तम जो मम मन क्रीडित ॥

नदी सैकतों में मेरे पद
चिह्न मिटाने पीछे चलती
वायु-तरंग-शीतल-गर्भ में
गरम साँसें दृग मूँद चलतीं ॥

सृष्टि की बुरी अच्छी बातें
तटस्थ देख रहे तारों ने
अनंत नभ-से, मेरे विगलित
मोती सम आँसू कण बीने ॥

नदी गौतमी पूत गर्भ में
गुंजित युग-युग विश्व-दुःख के
जीवन गीतों को दुहराने
मैं ही हूँ रूप अवशेष के ॥

चुक्कलु

मूल: श्री तुम्मुल सीतारामभूर्ति चौधरी

1. साचल समुद्रविपिन
   क्ष्मा चक्रमुनॅल्ल नैजमंजुल रोचि
   वीची मंडलि दन्पॅडि
   यी चुक्कल पुट्टु चंदमेमंदुरया ?
2. निर्गत मोहाद्य सुहृ
   द्वर्गुलु पर तत्त्व विदुलु "तमसो मा ज्यो
   तिर्गम" येति वदन्मुनि
   भर्गुलु दीपिंतुरा नभःस्थलि निद्दुल् ?
3. ऋग्यजुष सूक्तमुलु छां
   दोग्यादुलु विनिचि मनिचि तॉलगिन ब्रह्म
   सग्यंलित मतु लारव
   मुग्यवनिक निट्टिरूपमुल वॅलगॅद्रा ?
4. अमृत प्रसुवुलु यजन
   क्रम कर्षणमूलमुलु सुरध्येयमुल
   भ्रि मयम्मुलु धेनुवुली
   रमणीयाकृतुलु रा विराजिल्लु नॉको ?
5. परिणत पातिव्रत्य
   स्फुरणस्वर माणलै प्रभूत त्याग
   स्थिरलैं पतिचिति नॅक्किन
   तरुणी रत्नम्मु लिद्लु तल चूपि रॉको ?
6. गंगांभः परिभा विशील सुषमा गारंबुलै चित्त भू
   श्रृंगच्छेद् मॉनर्चि दुष्कर तपोर्चीरासुलै प्रायमुन्
   सिंगारंबुनु जाति धर्म पद्वी सेवार्थ मर्पिं चि मे
   निं गोल्पोयिन भारतीय विधवा नीकम्मुली चुक्कला ?

तारे

अनु : डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. पर्वत सागर वनयुत क्ष्मा को
   दे निसर्ग प्रकाश तरंग
   खुश करनेवाले तारों के
   क्या कहते जन्म का ढंग ?

2. मोह रहित पर-तत्त्व ज्ञानी
   आदि सुहृद्वर जो कहते
   " तमसो मा ज्योतिर्गमय " बने
   तारे क्या गगन चमकते ?

3. वेदोपनिषद्वचन सुनाकर
   जाति जिला, ब्रह्म माल्य में
   निविष्ट मति, हट, चमक रहे क्या
   रव गुण गगन नेपथ्य में ?

4. अमृत प्रसू, यजन याग कर्मों
   औ' खेती के मूल,
   सुर ध्येय अग्निमय धेनु चमक
   रही क्या बन नभ फूल ?

5. अतुलित पातिव्रत्य से प्रेरित
   होकर बन दृढ़ त्यागशील
   पति चिता पर चढ़ जल नारियाँ
   चमक रहीं क्या गगन नील ?

6. गंगा विनिर्मल शील सुषमा के बनकर आगार
   काम विजयिनी तप दीपित तन हो तजकर श्रृंगार
   यौवन सारा जाति धर्म की सेवा में ही अर्पित कर
   स्वर्गस्थ हुईं क्या भारतीय विधवाएँ तारे बनकर ?

7. వసుధా రాజ్యమ్ములు గా
కసి పులికి కోసి తనువు నర్థుల కిడి
ధర్మ సపర్య మునిగి తేలిన
యొసపరి లిట్టలుండిరే చదలన్ ?

8. ఎత్తిన కటారి దిశక
న్నుట్ట దొగాడి శత్రునిర్మథన కళా
విత్తములై ప్రజ నేలిన
యుత్తమ సమ్రాట్టు లిట్ట లుండురే మింటన్ ?

9. పరిభావజనక దుర్భర
పరతంత్రత నెదిరి దేశ భక్త్యుల్బణులై
యురి కంబములెక్కిన పో
టరూ లెవర వేది నిట్లు ఠవణిల్లెదరా ?

10. పతిత ప్రజా సమాజో
న్నతి క్రుత్సంస్కృతికి జీవన స్వార్థములం
కితముల్ పచరించు తథా
గతాదులా నింగి నిట్లు కాలెడి రిక్కల్ ?

11. మసృణ మకరందధారా
విస్ఫుమర పుణ్య ప్రబంధ విరచన పరితః
ప్రసృత ప్రథా మహిష్ఠులు
రస జీవులు సుకవులుదురా యీసరణిన్ !

12. కాలెడి పొట్టతో విరతి గానని చింతలతో విశీర్ణమై
సోలెడి మేనితో బడుగు చూపులతో నిజరక్త మాంస కం
కాళములర్థ మత్తులకు గా నిచటన్ బలి వెట్టిరెవ్వరా
మాలలు మాదిగల్ గగనమంటపమెక్కిరె యిట్లు చుక్కలై !

7. राज्य ही नहीं, काट काट तन
का भी करके दान
नभ शोभित क्या यों तारे बन
नर साहसी महान ?

8. तलवार उठा, न झुका, जो रण
करते रिपु संहार
प्रजा सुसेवक वे नृप करते
क्या यों गगन विहार ?

9. अपमानित दास बने, करके
स्वतंत्रता पर प्राण निछावर
शूली पर चढ़े वीर विलसित
हैं क्या यों अंबर वेदी पर ?

10. पतित प्रजा की उन्नति के हित
जीवन स्वार्थों का कर अर्पण
विख्यात हुए तथागतादिक
चमक रहे क्या बन तारा गण ?

11. कोमल रस मकरंद प्रवाहक
पुण्य महा काव्य प्रणेता
रस सिद्ध कवीश्वर शोभित क्या
यों बनकर हृदय-विजेता ?

12. जलता पेट थकी देह लिए अविरल चिंता पीड़ित
रक्तमांस हीन कंकाल धन मत्तों को कर अर्पित
दुर्बल दृष्टि भरे दुत्कारा जाकर जीवन में
अछूत चमार चमकते क्या चढ़ यों गगनांगन में ?

संक्रांति

मूल : श्री तुम्मल सीताराममूर्ति चौधरी

1. कॉसरि नूरिन पञ्चि पसपु पूत मॉगान
   गुम्मडि पू दुमारम्मु नट्टि
   कंड रेगड़ नार बंडि कनुपंडुवै
   पॉलुचु मिर्यपु पंडु बॉट्टु पॅट्टि
   वलि पॅम्मुनकु नॉक्कवासि हॅच्चयिनट्टि
   नुनु मंचु तॅर चीर नूलुकॉल्पि
   बंति पूवुलकु चेमंति नॅय्यमु गूर्चि
   कबरी भरम्मु चक्कन कुदिर्चि
   पंट कळ्ळालु मुनु बराबरुलु सेय
   गूडु कट्टिन तॅलि मब्बु गॉडुगु नीड
   कद्लि वच्चॅनु भाग्याल कडलि वोलॅ
   मकर संक्रांति लक्ष्मि हेमंत वीथि ॥

2. नॅल दप्पिनट्टि कोडलि चेत नॉकयत्त
   बोगि पॉङ्गलि पूज पूर्ति चेसॅ
   पुट्टिनिंटिकि वच्चिनट्टि कूतु गुलाबि
   चॅक्किळ्ळ नॉकतल्लि चॅनकि पुणिकॅ
   मारु वड्डिंडचॅडि मरदलि कॅङ्गेलु
   पिसिकि वलदनॅ नॉक पॅङ्कॅ बाव
   वंगि मुग्गुलु दिद्दु वधुवुपै नीचॅल्लॅ
   गदि वीडि चनु नॉक गड्डसु मगडु

संक्रांति

अनु : डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. कुम्हड़े के फूलों का पराग ही लगा करके
खेतों में मँड़ी पड़ी हल्दी भरे वदन में
काली मिट्टी में लाल-लाल पकके नेत्रोत्सव
करती मिर्चों का देके तिलक वदन में
झीनी साड़ी से भी झीने हिम-परदे की साड़ी
नव कोमल धर कर सुंदर तन में
गेंदे और गुलदाऊदी फूलों को प्यारे प्यारे
लगाकर सुंदरता से केश बंधन में
पंक्ति खड़े जब सेवा करते
फसल भरे खलिहान
मकर संक्रांति श्री आयी बन
भाग्य समुद्र महान ॥

2. गर्भवती पुत्रवधू से सास किसीने 'भोगी'
के दिन को 'पॉङ्गलि' की पूजा पूर्ण करायी
अपनी प्यारी बेटी के गुलाबी कपोलों को छू
माता ने उसे प्यार किया जो मायके आयी
हठी नटखट जीजा ने मना किया दुबारा
परोसनेवाली साली की दबाके कलायी
झुकी चौक भरती वधू पर जाते कमरे
से चतुर पति ने की जल की छिड़कायी ।

अपुडॅ वच्चिन प्रियुनि सोयगमु गनुचु
तलुपु चाटुन नॉक्क पैद्लि चमर्चॅ
मधुर मधुरानुराग साम्रज्य पीठि
जगमु कॉलुवुंडॅ मकर ध्वजंबु नॅत्ति ॥

3. लेगंटि पाललो क्रागि मागिन तीय
तीय कप्पुर भोगि पायसंबु
चवुलूरु करिवेपचिवुराकुतो गम
गमलाडु पैर वंकाय कूर
तरुण कुस्तुंबरी दळ मैलिमै नाल्क
लुप्पु डुल्चॅडु नक्कदोस बज्जि
कॉत्त बॅल्लपु तोटिकॉडलै मरिगिन
मदुरु गुम्मडि पंडु मुदुरु पुलुसु
जिड्डु तेरिन वॅन्नॅल गड्ड पॅरुगु
गर गरिक जाडु मुंगारु चॅरुकुरसमु
संतरिंचितिविंदु भोजनमु सेय
रंडु रंडनि पिलिचॅ संक्रमण लक्ष्मि ॥

नवागत प्रिय को देख किवाड़
ओट से बाला प्रस्वेदित
उठा मकर ध्वज मधुरानुराग-
साम्रज्य पीठ पर जग शोभित ॥

3. नयी ब्यायी गाय के दूध में पक पककर
कर्पूर सुगंधित पायस है मधुर बना ।
मीठा-नीम सुगंधित पल्लवों से बना साग
कोमल बैंगन का लार लाता स्वदिष्ट बना ।
धनिया की पत्ती से मिल जीभ को ललचाता
ककड़ी का भजिया भी ज़ायकेदार बना ।
नये गुड़ की याता बनकर बहुत बढ़े
मीठे कुम्हड़े का गाढ़ा 'पुलुसु'* बना ।
चिकना गाढ़ा चाँदनी-दही
इक्षुदंड मधुरस दायक
सजा बुलाती संक्रांति श्री
दावत खाने सुख दायक ॥

---

* आंध्र के भोजन का एक व्यंजन विशेष ।

विद्यारण्य

मूल: श्री कॉडालि वेंक्कट सुब्बाराव

1. तममु नडंचि युत्तम पदंबुनु बॉन्दिन मौनुलंदु स्वा
थॅमोकटॅ गुत्त कॉन्नदि परस्पर संश्रयभाव बंधन
क्षममयि पॉल्चु व्यक्तियुनु संघमु दानि नतिक्रमिंचि
स्वीयमुनकु लोकमुन् वदलिनट्टि घनुल् निनु मॅच्चुकॉन्दुरे ?

2. "लोकमु भद्रमै सुख विलोकनमै पॉलुपॉन्दुनाडु स्व
र्लोकमॉ मोक्षमो कनि वॅलुंगुट धर्ममु ; कानि लोकमे
चीकटियै विपत्तुलकु चिक्किन नाडु तपंबु मोक्षमुन्
चेकॉनि मुक्कु मूसुकॉनि चॅट्टुल गुट्टल बट्ट धर्ममे ?"

3. अनि तलपोसि तॅल्गु भुवन प्रळयंबुन कड्डु कट्ट वे
सिन महनीय मूर्ति वनि चॅप्पिरि निन्नॉक विग्रहंबु चे
सि निलिपि नित्यमुन् प्रज भजिंचुचु नुंडुट कांचि धन्य जी
वन पथवर्तुलैति मनुवारलु नी गुडि चूड वच्चु चोन् ॥

4. देश क्षोभ मराजकंबुनु, मदांधी भूत शत्रु क्षमा
धीशोज्जृंभण मार्तपौरजन वृत्ति च्छेदनोद्रेक म
त्याशा पूरित राष्ट्र पालक दुरांताख्यानमुन् काकति
श्रीशुंडोडिन नाडु तॅल्गु धर मुंचॅन् नीयशःसृष्टिकै ॥

5. अल नंदान्वयमग्गिलो पॉगिलि नीरै पोव, नंदुंडि मौ
र्युल साम्राज्यमु बैट पड्डयदि विप्रुंडॉक्कडानाश स्र
ष्टुलकुन् हेतुवु, नीवॉ केवलमु तेजोमूर्ति वै सात्विको
ज्ज्वल सृष्टि प्रतिपादकुंड वयिनावा ? तॅलुगु संश्लाघनन् !

विद्यारण्य

अनुः डॉ० चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. तमस दबा उत्तम पद पानेवाले ऋषि मुनियों में
स्वार्थ हुआ है केन्द्रित, आपस के संश्रित भावों में
विकसित होनेवाले व्यष्टि-समष्टि-परस्पर-बंधन
छोड़े निज हित, जग तज, होंगे क्या तुझसे प्रमुदित मन?

2. "जग मंगल सुखमय जब हो, तब स्वर्ग मोक्ष के हि
एकांत तपस्या करने से होता धर्म सुशोभित।
पर जब जग अंधकारमय बन फँसकर विपदाओं में
दुःखी आँख बंदकर तप करना क्या धर्म वनों में?'"

3. यही सोचकर आंध्र देश में प्रलय रोकने वाले
तुमको कहते मूर्ति बनाकर पूजा करनेवाले
देव महान और अपने को धन्य मानते, जब हम
देखने गये मंदिर तेरा, धीरे वीर ऋषिसत्तम!

4. काकतीय राजा हार गये जब तब डूब गयी थी
आंध्र भूमि शत्रु-बाढ़ में औ हलचल फैल गयी थी
राज अराजकता का, फैला शासक दल-दुःशासन,
आर्त जनों का हाहारव करने तेरा कीर्ति सृजन॥

5. जब नंदान्वय का नाश हुआ मौर्य राज्य सृजन हुआ
तब उस नाश सृजन का कारण एक हठी विप्र हुआ।
लेकिन तू तेज पुंज होकर सत्त्व सृष्टि हेतु हुआ
अशेष आंध्र जन प्रशंसा का, आदर का पात्र हुआ।

6. చేరచిన దాని బాగు चेयुट दुर्लभ मट्टिट तॅल्गु रा
ज्यरमनु, ओरुगल्लु निलयंबुन कोटल पड्ड राळ्ळ पॅन्
बरुवुल क्रुंगुदानि, सुलभंबुग पैकि तॅरलचि दिव्य सुं
दर रुचि मूर्ति चेसितिवि तल्लि ऋणंबुनु तीर्चिनावु पो ।

7. ऑक चेत पाडैन ओरुगल सिरुलनु
विद्यानगर राज वीथि कॅत्ति,
ऑक चेत क्षीणत नॉन्दु हिन्दू मत
वैशाल्व भाव संपदल नॅत्ति
ऑक चेत राजकीयोन्नति लो मंत्र
शक्ति युक्तुल 'परजाल' नॅत्ति
ऑक चेत योग सायुज्यांतरानंद
तत्व साराच्छ साधनमु लॅत्ति
इह परंबुल मतराजकीयमुलनु
ऑकटि कॉक्कटि पॉसगनि विकट वस्तु
जालमुल नैक्य परचि निस्संगमंदु
संगिवै संगमंदु निस्संगिवैतॆ !

8. अपुडु पुराण कालमुनयंदु वसिष्ठुडु ; राज्य वेत्तलन्
निपुणुडु साधु पुंगवुडु नेडु महात्मुडु गाँधि, तॅल्गु भू
मिपति चरित्र वेळनुसुमी युगमध्यमुनंदु नीवु ; मा
तृपद नितांतपूजकु विधिंचिन ब्रह्ममु मूडु मूर्तुला ?

9. ऑक कालबुन नॉक्क दिव्य ऋषि चेयुन् राज्य निर्माण सा
धक वर्गंबदि शक्ति मंतमयि स्वातंत्र्यंबु स्थापिंचु, न
ट्लेकदा नीदु पवित्र जीवितमु वर्तिंचुन्, यशः काय का
मुकुलौ वार लॅट्टुल् तलंचिन सदा मोदंबु गाकुंडुने ?'

6. बिगड़ी बात बनाना मुश्किल पर उस राज्य रमा को
जो शिथिल काकतीय भवन में दबी पड़ी उस माँ को
बाहर लाकर तुमने सुंदर सरुचिर मूर्ति बनाया।
माता के ऋण से अपने को तुमने उऋण बनाया ॥

7. शिथिल ओरुगल्लु की लक्ष्मी को विद्यानगर
वीथियों में पहुँचा करके एक कर से
नष्ट प्राय हिन्दू धर्म की विशालता की भाव-
संपदाओं को ऊँचा करके एक कर से
राजकाज की उन्नति में मंत्रशक्ति युक्तियों
के परदों को उठा करके एक कर से
योग सायुज्यांतर्गत तत्त्व की प्राप्ति
के साधनों को उठा करके एक कर से
पारस्परिक विरोधी इह पर राजनीति धर्मों को
एक बनाकर पूर्ण बनाया जीवन के कर्मों को ॥
संगत्व दिखाया होकर निस्संग
निस्संगत्व दिखाया रहकर संग ॥

8. पुराण युग में ऋषिवर वशिष्ठ और आज के युग में
गाँधी साधु प्रवर श्रेष्ठ निपुण जो राजनीति जग में
और मध्य युग में तो तुम थे आंध्र-नृप इतिहास के
क्या मातृ पूजा के हित हुए त्रिरूप परब्रह्म के?

9. करता किसी समय एक दिव्य ऋषि राज्य की साधना
करती वह हो सफल देश में स्वातंत्र्य की स्थापना
तेरा अनुपम पवित्र जीवन बीता इसी मार्ग से
सच, पावन प्रमोद मिलता यश-कामी-कार्य-मार्ग से ॥

10. नीकन्नन् कड्ड गॉप्पवारलु तपोनिष्ठात्मकुल् पुट्टरे
लोकवंदुन ? वारि देवतलुगा रूपिंचि येटेट पू
जा कळ्याणमु सल्पिनारॅ ? प्रजलुत्साहंबु रॅट्टिंपु नी
के काविंचुटदेल नोयि ? परमांगीकार सूचि व्रतुल् ”

11. “ आत्मवत्सर्वभूतानि ” यनि तलंचि
निन्नु नी देश मात तो नुन्नतमगु
पदवि पॉन्दिञ्चि आटलो पंडिनावु
मुक्ति नीकु देशानिकि भुक्ति भक्ति ”

12. नी पेरु शाश्वतंबयि
नी पेरुन निलचिनट्टि निलयमु नुसियै
नी पूज वीरपूजो
द्दीपनमयि निल्चॅनोयि तॅल्गु धरित्रिन् ।

13. आ कन्नु मूतलो नंतर्विलील पं
चानिल स्तंभनात्मार्चि वॅलुगु
आ बॉम्म मोड्पु लो नसमाक्षु सॅग कन्नु
मंटरेगिन मुळ्ळु माट्ठ मणुगु
आ कन्नु विप्पुलो नखिल राजन्य शि
क्षादक्षमैन वर्चस्सु मॅरयु
आ चिरु नव्वुलो नांध्र साम्राज्य सु
श्री नव्य जीवनशील मिमुड्डु
ई शिला विग्रहमुनंदॅ यिंत गॉप्प
कुदुरु कॉनियुंड ऊहलु गुमुलु कॉनिन
ऍन्त वाडवो निनु स्तुतियिंप गलमॅ
विजय नगरांध्र देवुडवॅ निंजबु ।”

(“ हंपी-क्षेत्र ” से)

10. कितने श्रेष्ठ तपस्वी जन्मे जग में तुमसे बढ़कर
क्या उनकी पूजा करते प्रति वर्ष देवता समझकर ?
जन तेरी ही पूजा करते क्यों उत्साही होकर ?
जग मंगल कारी तेरे कार्यों को अंगीकृत कर ?

11. "आत्म वत् सर्वं भूतानि" यही तूने सोचा
मातृदेश को औ अपने को भी कर ऊँचा
अपने जीवन की क्रीड़ा में सफल हुआ तू
भोजन भक्ति देश को देकर मुक्त हुआ तू ॥

12. तव नामांकित नगर मिला रज, शाश्वत तेरा नाम
वीराराधन उद्दीपन तव पूजा आंध्र सुधाम ॥

13. उस नेत्र निमीलन में अंतर पंचानिल
स्तंभन की आत्म ज्योति उज्ज्वल जलती है ।
उन भ्रूविक्षेपों में विषम-नयन की जागी
भ्रमण शील ज्वालाएँ छिप दब जाती हैं ।
उस नेत्रोन्मीलन में समस्त राजाओं को भी
शिक्षण देने की तेजो राशि झलकती है ।
उस मंद हँसी में आंध्र साम्राज्य की लक्ष्मी के
जीवन की शालीनता नव्य नव्य समाती है ।
यह शिला मूर्ति ही जब इतनी
दिव्य कल्पना पूर्ण
क्या जाय कहा ? विजयनगर का,
तू सच, देव प्रपूर्ण ॥

('हंपी-क्षेत्र' से)

निरीक्षण

मूल : सौदामिनी

आकसमुन मब्बु दट्ट
मैक्र्म्मॅनु, चिटपटमनु
चिनुकुल तीयनि पाटलु
चॅवुल किंपु गूर्चुचुंडॅ ।
गुन्न मादि कॊम्मलंदु
कोकिल पाडॅडु पाटलु
विनवच्चुचुनुंडॅ, निट्ले
वेचियुंटि नॅप्पुडु प्रियु
डरुदॅन्चॅडुना नेनॅपु
डामुट्टु मॊगम्मु गांतु
नायंचुन् नाहृदय
म्मातुरतन् जॅन्दुचुंडॅ ।

प्रतीक्षा

अनु: श्री एम. संगमेशम्

आसमान में बादल कारे
रिमझिम रिमझिम मोती वारे
बारिश की वह तान सुरीली
कानों भरती गूँज निराली ।
आम्र वृक्ष की डालों में वह
कोयल की इक कूक सुखावह
मधुर मधुर सब सुनती हूँ
आतुर हो बाट जोहती हूँ
जाने प्रिय कब आ जायेंगे
प्यारा मुख कब दिखलायेंगे ॥

गड्डि पुव्वु

मूल : श्री मल्लवरपु विश्वेश्वर राव

तॅप्पवोलिक चंद्र बिंबं
तेलिपोतो वुंदि निंगिनि
अंदुलो ना मुद्दु प्रेयसि
वुंदि काबोलु
लेत चिरुनव्वॅन्दुको, सिग लोन वॅन्नॅल मल्लॅलॅन्दुकों
चेति सैगल चेसि नन्नट्ठु चेर रम्नुटॅन्दुको ?
गड्डि पुव्वुनि, नन्नु प्रेयसि
गालि तरगल तेलिपोतू
कळ्ळलो अद्दाल मॅरुगुलु चल्लि कलचॅद वॅन्दुके !
नीकु नेने कावलिस्ते
निंगि वॉदुलुकु नीवे सीता
कोक चिलकवो देनिवो अयि रागलवु !
—नेनॉद्दु कनके
मुत्तॅमुलो रत्नालो, एरुतो
चित्तमवु ना मब्बुकडलिनॅ
अर्ध चंद्रुडि दोनॅ लोने
आडुकुंटावु
गड्डि पुव्वुनि रेकु-रॅप्पल
कललु कंटो कलवरिस्तो
कलत निद्दुर लोनॅ एप्पुडो
कळ्ळु मूस्तानु ।

घास का फूल

मूलः श्री एम. संगमेशम

आसमान में चाँद शान से
तैर रहा है बेड़े के समान
शायद मेरी प्रिया उसी में बैठी हो सानंद।
हल्की-सी मुसकान किसलिए
चोटी में चंद्रिका-चमेली क्यों?
कर से कर संकेत मुझे उधर पास बुलाती क्यों?
फूल घास का मैं, प्यारी!
पवन लहर पर तिरते चलते
आँखों में निज छवि छिटका विकल बना जाती क्यों?
मुझे चाहती हो तो क्षण में
आसमान से उतर पास में
तितली या ऐसी कुछ बन आओ तुम्हीं, वहीं बैठी क्यों?
नहीं चाहती मुझे, तभी तो
विचित्र मेघांबुधि, मोती—
मणि चुनते अर्ध चंद्र बेड़े में क्रीड़ा करती यों।
फूल घास का, पलक-पटल में
स्वप्न देखते बड़-बड़ करते
कच्ची नींद में कभी मैं आँख मूँद लूँ चिंता क्यों!

गायनी प्रिय

मूल: श्री मल्लवरपु विश्वेश्वर राव

ना प्रथम दृष्टि नी सुवर्णांग जलज
मर विरिसि तेलॅ नी गानमंदु बाल !
आ मधुर मूर्ति संस्मृतुलंद कोर्कि
पूचि, वासिंचि, नेडुनु वेचियुंटि
नी मधुर गान मानाडु नॅम्मि वोलॅ
पुरि नॅगय बोसि मिल मिल मॅरसि पोव
विपुल नेत्राल नी मुग्ध वीक्षणम्मु
लट्टु निट्टुल सिग्गुतो नडयाडि नायि !
नी यॉडिनि मुद्दु वीणिय निलिपि मीट
नंगुळी चंचल किसलयम्मुलरुण
रागमुल वीण गळमु जेगुरिंचॅ,
कोकिलल पाटले दान रेकुलॅत्तॅ ।
चिन्नि चिन्नि सिग्गु चिवुरुलु पन्नि नेडु
तन यॉडिनि दाचिकॉनियॅ यौवनमु निन्नु
मुसि मुसि यमायकत्वम्मु मूगवोयि,
पलुक जालदॉ पॅदवुलु वॅलिकि बारि ॥

गायनी प्रिया

अनु : श्री एम. संगमेशम्

प्रथम बार जब मैंने देखा,
तव संगीत सुधा में तिरता
तव स्वर्णांग सरोज अध खिला
वह मूर्ति खिली स्मृति में, वासित
अब बाट जोहता हूँ प्रिये !
तेरे मधुर गान ने उस दिन
पंख खोलकर मोर समान
चम चम करती चमक दिखायी
नयनों की तव मुग्ध दृष्टियाँ
झुकी फिरीं चहुँ ओर प्रिये !
अंगुली किसलय से झंकृत हो
अंक में रखी वीणा का कंठ
अरुणराग रंजित लाल हुआ
उससे हुआ निनादित व्यापित
कोयल का कलगान प्रिये !
यौवन ने तुमको छिपा लिया
लज्जारुण पल्लव बीच नन्हें
मंदहासमय भोलापन बन
गूँगी बाहर न निकलती क्या
तव अधरों की बोल प्रिये ?

पाराणि

मूल : उमर अलीशा

मुखुगु तीयवु रावु ना मुंदु कवल
येल यडियास बॅट्ट दी लील बाल ?
ये नॉनर्चिन यपराध मेमॉ चॅपुम
हृदयमुनु चिंपि पेट्टॅद निद्गॉ कॉनुमु ।

वेडि क्रॉन्नॅत्तु रदिगॉ नी प्रेम गीत
मुल पठिंचुचु बुसबुसपॉझि पॉरलि
वच्चुचुन्नदि नी पादपद्ममंट
वेरॅ पाराणि नीविक पॅट्टु कॉनकु ॥

जावक

अनु: डॉ. चावलि सूर्यनारायणमूर्ति

घूँघट न हटाती हो, सामने न आती हो
हे बाले ! क्यों मुझको यों व्यथित बनाती हो ?
बतलाओ तो मैंने क्या अपराध किया है ?
लो चीर चीर चरणों में धर हृदय दिया है ॥

यह लो, उमड़ उमड़ नव उष्ण रक्त बहता है ।
तेरे प्रेम-भरे गीतों को सुन बढ़ता है ।
आतुर आता छूने तेरे चरण कमल को ।
अलग लगा मत जावक सौंदर्य प्रसाधन को ॥

ताजमहल्

मूल : श्री बसवराजु अप्पाराव

मामिडि चॅट्टुनु अल्लुकॉन्नदी
माधवी लतॉकटि
येमारॅडिटि प्रेम संपदा
इंतिंतनलेमू !

चूडलेनि पापिष्ठि तुफानु
ऊड बीकॅ लतनू,
मोडैपोयी मामिडि चॅट्टू
मॉगमु वेलवेसॅ !

मुच्चटैन आकुलु कायलने
वॅच्चनि कन्नीळ्ळोड्ची
पच्चनाकुला बॉम्मरिंटिलो
पंडॉक्कटि राल्ची

मामिडि चॅट्टू माधवि लततो
मायलॉ गलिसिंदि
कामित मिच्चे मामिडि पंडु
कवुलकु मिगिलिंदि ॥

ताजमहल

अनु: डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

रसाल के तरु से लिपटी है
माधवी लता एक ।
दोनों का कितना प्रेम, नहीं
कह सकते हैं नेक ॥

ईर्ष्यालु तूफ़ान ने उखाड़
लता को दिया फेंक ।
ठूँठ बने तरु ने अपना मुँह
लटकाया यह देख ॥

सुंदर केरी पत्तों रूपी
अश्रु गिराये और
फल एक गिराया हरित पल्ल
गुडिया-घर के ठौर ॥

माया में मिल गया आम्रतरु
माधवी लता साथ ।
कामित दायी फल शेष रहा
है कवियों के हाथ ॥

नागुल चविति

मूल : श्री बसवराजु अप्पाराव्

नीपुट्ट दरिकि ना पाप लॉच्चेरु
पाप पुण्यम्मुल वासने लेनि
ब्रह्मस्वरूपुलौ पसिकूनलोयि
कोपिंचि बुस्सलु कॉट्टबोकोयि !
नागुल्ल चवितिकी, नागेंद्र नीकु
पॉट्टनिंडा पालु पोसेमु तंड्रि !!

चीकटि लो नी शिरसु तॉक्केमु
कसिदीर मम्मल्नि काटय्यबोकु,
कोवपुट्टा लोनि कोंडनागन्न
पगलु साधिंचि मा प्राणालु दीकु
नागुल्ल चवितिकी, नागेंद्र नीकु
पॉट्टनिंडा पालु पोसेमु तंड्रि !!

अर्धरातिरि वेळ अपरात्रिवेळ
पापमेमॅरुगनि पसुलु तिरिगेनि,
धरणिकि जीवनाधारालु सुम्म
वाटिनि रोषान काटेयबोकु
नागुल्ल चवितिकी, नागेंद्र नीकु
पॉट्टनिंडा पालु पोसेमु तंड्रि !!

नाग चतुर्थी

अनु: डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

मेरे बच्चे तेरी बाँबी
के पास चले आते हैं
पाप पुण्य के भाव से परे
ब्रह्म स्वरूपी शिशु वे हैं।
क्रोधित हो तुम फूत्कार न करना
नाग चतुर्थी के दिन नागेश्वर हे!
पय भर पेट पिलायेंगे तात! तुझे ॥

अंधेरे में अनजान धरें
पैर अगर तेरे सिर पर
तब अकस निकालो मत निर्दय
होकर काट हमें खाकर।
नागराज मतवाले! जान न लेना।
नाग चतुर्थी के दिन नागेश्वर हे!
पय भर पेट पिलायेंगे तात! तझे ॥

अर्धरात्रि या कुरात्रि वेला
में पशु निष्पाप डोलते
उदारता से दूध पिलाकर
जो इस जगत को पालते
क्रोधित होकर उनको काट न खाना
नाग चतुर्थी के दिन नागेश्वर हे!
पय भर पेट पिलायेंगे तात! तुझे ॥

अट्ठु कॉण्ड इट्ठु कॉण्ड आरॅण्टि नड्डुम
नागुल्ल कॉण्डलो नाट्यमाडेटि
दिव्य सुंदर नाग ! देहि यन्नामु
कनिपॅट्टि मम्मॅपुड्डु कापाड वोयि
नागुल्ल चवितिकी, नागेंद्र नीकु
पॉट्टनिंडा पालु पोसेमु तंड्रि !!

पगलनक रेयनक पनि पाटलंदु
मुनिगि तेलेटि ना मोहाल बरिणॅ
कंचॅलु कंपलु गडिचेटिवेळ
कंपचाट्टुन नुंडि कॉम्प दीकोयि
नागुल्ल चवितिकी, नागेंद्र नीकु
पॉट्टनिंडा पालु पोसेमु तंड्रि !!

उधर पहाड़ी इधर पहाड़ी
बीच नाचनेवाले हे
दिव्य सुंदर नाग! तुझसे
हम अंजलि भरकर माँगें
ध्यान सदा रखकर तुम रक्षा करना
नाग चतुर्थी के दिन नागेश्वर हे!
पय भर पेट पिलायेंगे तात! तुझे ॥

दिन रात परिश्रम रत रहते
जो मोहक सुहाग मेरे।
झाड़ी बाड़ों से हो आते
खेतों के घुप अंधेरे।
आड़ों से मम सुहाग पोंछ न देना
नाग चतुर्थी के दिन नागेश्वर हे!
पय भर पेट पिलायेंगे तात! तुझे ॥

दक्षाराम दर्शनमु

मूलः श्रीइंद्रकंटि हनुमच्छास्त्रि

1. ई सप्तापग चॅन्त निलिच कनवोयी ! भीमनाथेश्वर
प्रासादांचित सांध्यराग कनक प्रस्फीत शोभावळुल्
न्यासीभूत महत्वरूपमुलु, वप्रौघम्मु लिच्चोट ने
वो संदेशमु लिच्चिच नीमदिनि द्रिप्पुन् दिव्यलोकम्मुलन् ॥

2. वॅलिगिंपबडॅ सांध्यदीपिकलु श्रीभीमेश सद्मांतर
स्थलि ; ने तॅल्गु पुराण पूरुषुल यात्मल् शैवभक्त्युन्नतिन्
ज्वलियिंप दॉरकॉन्नवो यिट शताब्दम्मुल् प्रयाणिंपगन्
शिललुन् जीवमुनिच्चि कांतुलनु पूचॅन् पच्चपूलट्लुगा ।

3. ओहो ! ई घनगोपुरम्मु लिट्टु लॉण्डॉण्टि न्विलोकिंचुचुन्
स्नेहांकम्मुग ने पुरा स्मृतुल वासिंगूर्चि भाषिंचुनो !
ऊहावीथुललो जलुक्य युग भाग्योद्यत्प्रभावम्मुलन्
वाहाटम्मुग संचरिंचॅडिनि, अब्बा ! चित्तमुरूपुचुन् ॥

4. नंदीशा ! निनुनॅन्निसार्लु गनि यानंदिंतुनो यिट्टिनी
यंदम्मुन् जेयिचाचि ताक मनसौ नय्या यथार्थभ्रमन्
मुंदुन्निल्वग गुंडॅलाडविट गॉम्मुल् चिम्मि ये वेळनो
यिंदूत्तंसुनि याज्ञपै गदलि यिट्टे लेतुवं चॅन्चॅदन् ॥

5. मॅडलो घंटिक नेल कॉत्तुकॉनि गंभीरम्मुगा पट्टु प
ट्टॅडलो मुव्वलु गंट लॅन्नो कनुपट्टॅन् म्रोयुचुन्नट्टुले
मुड्डलन्नेर्पुलु चॅक्कि विंत पदकम्मुल् तीर्चॅ ; आनाटियां
ध्रुडु चेयॅत्तिन राळ्ळु गूड दम कॅन्नु विप्पि भाषिंचॅनो ॥

*दक्षाराम-दर्शन

अनु: श्री के. वें. नृसिंह अप्पाराव

1. भाई! देखो यहीं खडा हो सप्त-गौतमी के तट पर
भीमनाथ मंदिर की शोभा सांध्य-राग से सुंदरतर
प्राकारों को देखो, मानों महत्त्व ही राशीकृत हो
जो तव मन से बातें करके दिव्य लोक पहुँचाते हों ॥

2. श्री भीमेश्वर मंदिर में सब सांध्य दीप-कलियाँ चमकीं
पूर्व काल के पुण्य-आंध्र शिव-भक्तों में से किन किन की
आत्मायें सदियों से इस विधि जलती हों क्या जानो तुम
पत्थर को भी प्राण मिले हैं जिससे निकले कांति-कुसुम ॥

3. देखो तो ये ऊँचे गोपुर एक दूसरे को लखकर
स्नेह भाव से क्या-क्या बातें करते गत की स्मृति लेकर
भाव-वीथि में चलुक्य-युग की भाग्य-समुन्नति चमक उठी
जिसकी स्मृति से हाय! हृदय की डोली झटपट डोल उठी ॥

4. हे नंदीश्वर! तुमको मैं नित देख हृष्ट हूँ कितनी बार
देख देख तव सुंदरता को छूना चाहूँ हाथ पसार
किंतु धडकता है दिल तुमको देख सत्य-नंदी-भ्रम से
जानूँ तुम तो उठ बैठोगे कभी महेश्वर-प्रेरण से ॥

5. कंठ में लगी घंटी भू से लगकर शोभा देती है
रेशम की गल-कंठी मानों किंकिणियों से बजती है
पत्थर पर ही विविध ग्रंथियाँ शिल्पकार रचते थे
मानों आन्ध्र-करों में पत्थर लोचन खोल, बोलते थे ॥

---

* दक्षाराम आंध्र के पूर्व गोदावरी जिले में एक प्रसिद्ध शैव क्षेत्र है जो दक्षिण काशी कहलाता है।

6. ई परिपूत भूमिपयि निंचुक पादमु नूनि येगगा
नोपदु चित्त, मेप्रतिम लुन्नवो दैवमूर्तुलुन्नवो
लोपलनंचु मंडपमुलुन् शिवलिंगमुलॅन्नि यॅन्नि शि
ल्पोपलमुल् कनंबडिनवो कद मुन्निट द्रविंचुचिनन् ।।

7. ई देवालय सौध कुड्यमुल ने ये पूर्व कंठम्मुलो
बोधातीतमुलै विनंबड्डचु नेवो चॅप्प नुंकिंचु भा
षा दारिद्र्यमुलित यड्डमयि, याशल् रिंचिले पोव मा
का दिव्यात्मुल भावमंददु शताब्द्यंतम्मु वीक्षिंचिनन् ।।

8. एवय्या ! कविसार्वभौम ! मुनु नी विक्षुस्फुरन्माधुरी
कैवल्यम्मुलु चिंद चॅप्पिनवि दक्षाराम सौभाग्यमुल्
आविख्यात रसज्ञतल् शिवपद ध्यानैक वैवश्यमुल्
लेवय्या ! परिकिंपगा निपुड्ड निल्चॅन् ग्राम मेदोयिटन् ।।

9. द्क्षाराम पुरम्मुलो निपुड्ड गंधर्वाप्सरो भामिनी
साक्षात्कारमु लेदु हृद्यतर तत्संगीत साहित्य का
लक्षेपम्मुलु मंजु नूपुर चलल्लास्यप्रसंग स्फुरत्
विक्षेपक्रम विभ्रमम्मु लवि यन्वेषिंचिनन् लेविटन् ।।

6. इस पवित्र धरणी के ऊपर पग धर-धरकर चलने में
शंका होती, मन में, कोई देव-मूर्तियाँ हों इसमें,
पुरा यही स्थल खोद लिया तो कई पुराने शिल्प मिले,
कितने ही सुंदरतर मंडप कितने ही शिवलिंग मिले ॥

7. इन मंदिर-कुड्यों में मानों पूर्व पुरुष के कंठ कई
कोई अस्फुट वाक्य सुनाते ऐसी मन में बात हुई
भाषा के दारिद्र्य-हेतु हम जान न पाये वह अर्थ
आस निरास हुई, सदियों की हुई प्रतीक्षा फिर व्यर्थ ॥

8. बोलो हे *कवि-सार्वभौम! जो पहले तुमने गाया था
इक्षु-मधुर बातों से दक्षाराम विभव, क्या खोया था?
तब की रसतत्परता जन में शिव-पद-चिंतन-परवशता
नहीं दीखती कहीं, किंतु अब कोई गाँव यहाँ बसता ॥

9. गंधर्व-भामिनी-गण का तो दक्षाराम-नगर में अब
साक्षात्कार नहीं होता है उनका गान न सुन पड़ता अब
साहित्य-सुधा सूख गयी है उनके नूपुर-संग कभी
लास्य मनोहर विभ्रम मिलते न अब खोज करने पर भी।

* तेलुगु भाषा के प्रसिद्ध कवि श्रीनाथ जिन्होंने भीमेश्वर पुराण की रचना की।

वार्धकमु

मूल : श्री वानमामल वरदाचार्य

1. मानवीय जीवन दिन मार्गमध्य
गत तृतीय याममु ! वार्धकमु ! तमिस्र
मिश्र संध्या प्रदोषमा ! मित्रवैरि !
स्वतनु पूर्णेंदु कृष्णपक्षमु ! नमोस्तु ॥

2. नादु स्वर्ग साम्राज्यमु नाशपरचि
त्रोयुचुंटिवि नरकंपु गोयिलोन
वॅनुक तिट्टलॉक्क यड्डुगुनु वेयनीवु
सखि पुनर्दर्शनावकाशम्मु लेदु ॥

3. पंडुटाकु तरुवुनुंडि रालॅडिवेळ
आकसमुन नल्लाडु विधमु
कनुल नाडु मूट गट्टि प्रयाणमै
यरुगुनाकु निंटि नरसिनपुडु ॥

4. वेडुक वच्चिनाड पृथिवी तल यात्रकु चूचुचुंडगा
मूडव जामुमिंचॅ तुद मुट्टॅनु तॅच्चिन डब्बुलन्नि, ना
नीड यदेमॉ कानि धरणि बॉडवै नडयाडुचुंडॅ वे
गूडग बोवुनो तिमिर कूटमुलोनि निशीथ मातृकन् ॥

बुढ़ापा

अनु: श्री हनुमच्छास्त्री "अयाचित"

1. मानव के जीवन रूपी दिन के
हो तुम जरा! तृतीय याम।
तमाच्छादित संध्या प्रदोष हे
मित्रों के हो दुश्मन सरनाम!
हे कृष्ण पक्ष अपने शरीर
रूपी शशि के! तुम्हें प्रणाम ॥

2. मेरा स्वर्ग सिंहासन हरकर
नरक गर्त में रहे हो डाल
चरण न रखने देते पीछे
न निरखने देते मधु-काल ॥

3. पका पात जब झड़ता तरु से
उड़ता है तब आकाश में
आँखों में यह दृश्य घूमता
रहता है नित वातास में।
मोट बाँधकर बाहर निकला
घर से जब करने प्रस्थान ॥

4. इस भू पर विहार करने आया था लेकर कुछ सार
आँखों ही आँखों में गुज़रे तृतीययाम के भी दिन चार
समाप्त है पाथेय सभी कुछ चलती है मम छाया दीर्घ
तिमिर कूट की निशीथ मातृका से मिलने जाती है वेग ॥

5. मीगड दीसिन पालै
ल्लागग रुचि द्प्पॅ वृद्धद्श, तावि सनन्
दीग पयि वाड्डु पूवट्ट
ल्लागिन यभिवृद्धि तोड नलरॅडि मेनन् ॥

6. बिगि वीडिन नरमुल वल
तॅगिपोयिन बंधनाल तेलु शुकम्मै
एगसिचनॅ नंद्मनुनदि
गगन चलच्चंचलानुकारिणि यगुचुन् ॥

7. कटिक कालुड्डु संसार गह्वरमुन
वच्चि पडिन जीवुलकु यौवन वनस्थ
जीवन प्रासमुलनु निश्चिंत मेपि
पॅञ्चुटलु कोतकनुचु भाविंप नैति ॥

8. कुरिसिन मेघमै यरसिंकुवलॅ तॅह्ल मॉगम्मु वैचॅ मे
लूकुरुलवि बोसिनोटि गुहलो बडि शाश्वतमस्तमिंचॅ सुं
दर दरहास चंद्रिकलु, त्वग्गति जोलॅलु व्रलियाडॅ न
स्थिर नवयौवन द्युति गतिंचॅनु मेन गळायि पूतयै ॥

5. मलाई विरहित दूध समान
स्वाद रहित बिलकुल बेकार ।
लता पर कुम्हलाए पुष्प-सा
झूलता करके अलंकार ।
रुका पुष्प का जैसे विकास
हुआ अवरुद्ध जीवन प्रकाश ।।

6. शिथिल नसों के जाल से
हुए बंधनों से शुक समान
मुक्त, उड़ी सुंदरता बनकर
नभ में चंचल चपला म्लान ।।

7. समझ न पाया, काल-पुरुष
जगत गुहा में करने वास
गिरे जीव काटने, पालता
दे यौवन वन जीवन-ग्रास ।।

8. धवल केश, जलहीन मेघ से
पोपले मुँह अस्त शशि-हास
लटकते चर्म-झोले, निकला
कलई भांति यौवन प्रकाश ।।

9. वयसॉक क्रोडॅ ताचुवलॅयिटन्नॅपुन्नॅ मॅगिन
ट्टिट यदुव बाल्यमुन्गनि वडि न्नुनुमीसल दुव्वि लोसॅगा
नि, यबल तानॅदुर्कॉनगनॅ वडि वंगि जयिंप जालकनॅ
वयिॅचनु तॅल्ल मोमुनिट्ठु, बाल विघातिकि श्रेय मब्बुना ?

10. प्रेतमॉग मय्यॅ नड्डमुन कूतगॉनमि
कूर्चॉनगलेक, तल मुग्गु गुल्ल यय्यॅ
काळ्ळु मूडय्यॅ नीचेति कट्टॅ गूडि
तप्पदिक तलक्रिंदैन तात पेरु ॥

---

9. यौवन आया है जीवन में
ज़हरीले नाग के समान ।
मूँछ पर ताव दे बालपने
को हटाया बन पहलवान ।
पर अबला सम्मुख हार गया
और गया उड़ मुँह का रंग
सच, बाल घातक को कभी मिल
सकता क्या श्रेयस का संग ?

10. ले प्रेत का मुँह, बेसहारे
बैठ न सकते, सिर सित धाम ।
लकुटी से तीन पाँव, लाख
कहो, पड़ गया बाबा नाम ॥

अद्वैत मूर्ति

मूल: श्री करुण श्री

चूॅंद वेलनो प्रणयसुंदरि ! काटुक कळ्ळलोनि आ
लोचन लेमिटो हरिण लोचनि ! नीचिरु नव्वुलोनि सं
कोचमु लॅन्दुको कुसुम कोमलि ! नी मधुरा धरम्मुलो
दाचुकॉनंग नेटिकि सुधामय सूक्ति कळाविलासिनी !

भावोद्यानमुनंदु क्रॉत्त वलपुं बंदिव्वळलो कोरिकल्
तीवल् सागॅनु पूलु पूचॅनु ; रसार्द्रीभूत चेतम्मु तो
" नीवे नेनुग " " नेने नीवुग " लतांगी ! येकमै पोद मी
प्रावृण्णीरद पंक्ति क्रिंद पुलकिंपन् पूर्व पुण्यावळुल् ॥

मन दांपत्यमु सत्यमौ प्रणय साम्राज्यम्मुलो लोतुलन्
गनियॅन् ; सागॅदु भाग्य नौक कविता काळिंदिलो नव्यजी
वन बृंदावन दिव्य सीम विहरिंपन् रम्मु ने कॉल्लगॉ
न्दुनु नी कोमल बाहु बंधनमु लंदुन् कोटि स्वर्गम्मुलन् ॥

अद्वैत मूर्ति

अनु: डॉ० पी. आदेश्वर राव

हे प्रणय-सुन्दरी! जाने क्यों देख रही हो अब भी?
हे हरिणलोचनी! कैसे भाव छिपे तुम्हारी कजरारी आँखों में?
झलक रहा क्यों प्रेयसि! संकोच तुम्हारी मुसकानों में?
हे कला-विलासिनी! छिपा रही क्यों सूक्ति सुधामय मधुराधर में?

नवल प्रेम-कुंजों की इच्छा-लतिकाएँ बढ़कर
फूल उठीं भावों के उपवन में;
इस पावस की मेघ-मालिका के नीचे
निज पूर्व पुण्य को पुलकित करते
लतांगी! रसार्द्रीभूत चेतनता में "तुम ही मैं बन"
"मैं ही तुम बन" हो जाएँगे एक दूसरे में विलीन।

बन सत्य हमारे दाम्पत्य ने
पाया प्रणय-राज्य की गहराई को;
भाग्य-नौका चली कविता की कालिन्दी में;
नव जीवन-बृन्दावन के दिव्य प्रान्त में
आओ प्रेयसि! विहार करने
मैं लूटूँगा कोटि स्वर्ग तुम्हारे कोमल बाहु-बन्धनों में।

सॅलयेरू

मूल : श्री पल्ला दुर्गय्य

कॉण्डपै वारॅवरॉ वॅण्डि करगिन नीरु
कुंडलो गुप्पुमनि क्रुम्मरिंचिन भांति
स्वर्धुनी वीचिकल जल्लुलाडॅडि करुल्
तॉण्डाललो मुंचि तुरु पॅत्तिन रीति
पच्चिमंचु द्रविंचि वच्चुनॅड दानितो
कलसि पारॅ ननंगुगालंपुबूदि यन
मंचुकॉलकुल तानमाडिलेचिन दिव्य
वार कामिनि यार्द्रवसनांचल मनंग
तळ तळ तळ तळ तळ तळत्कांतितो
जल जला जला जला सॅलयेरु प्रवहिंचॅ ।

सानुवुल शिखराळितो नेकमॉनरिंचि
आसु बोसिन रीति अट्टुनिट्टु दिरुगाडि
पादरसपुं गुंड पगिलि पारॅ ननंग

निर्झर

अनु: श्री के. वें. नृसिंह अप्पाराव

कोई पहाड की चोटी पर
तप्त रजत-द्रव कुंभों में भर
मानों उँडेलता हो सत्वर
झर झर झर झर झरता निर्झर ।
गङ्गा-तरंग-बीच नहाकर
हाथी सूँडों में जल भरकर
मानों फेंक रहे हैं बाहर
झर झर झर झर झरता निर्झर ।
सद्यः पतित हिम संतत गलकर
बहता मन्मथ-देह-भस्म धर
मानों लाता साथ मिलाकर
झर झर झर झर झरता निर्झर ।
नीहार-सरोवर से सुंदर
सुर युवती जो उठी नहाकर
मानों उसकी भीगी चादर
झर झर झर झर झरता निर्झर
जग मग जग मग सरस चमककर
झर झर झर झर झरता निर्झर ॥
सानु शिखर को जोड़ परस्पर
तुरी सदृश सब ओर लपककर
मानों पारस-कुंभ फूटकर
बहता हो, यह भ्रम उपजाकर

मरकतपु वच्चिकल मळ्ळलोपल दूरि
निकट स्थलमुलॅल्ल निग निगन्निगलाडि
चूचु वारल कनुल दोचुकॉनु नट्ठुचेसि
पंट चेडिय आकुपच्चकोक पयंट
मुत्तॅपु जलतारु मुरुवु पोतलु पोसि
दोरपूवुलु कॉन्नि दोसिळ्ळ गोसिकॉनि
परिमळमु मैनिंड पट्टिंचुकॉने लेच्चि
दारिकड्डुग नुन्न तरुल मूलमु लॉरसि
पक्व फलमुल बुडमि बड रालगा गॉट्टि
फलरसास्वादनन् बल मॅसगगा
पूलसॉम्मुल नॉडल् पोषिंचुकॉनि मुरिसि
कलनादमुल नॅडद् पुलकिंत्वगुचुंड
नलु दॅसलु वॅलुगु चिरुनगवु चूपुलु विसरि
एंदु जूचिन गानि एदुरॅव्वरुनु लेक
इच्छा विहारम्मु निट्ठकॉन्त तरि सलिपि
चिटि पॉटि नडल हारुसिक बोलॅ नपुडेगि
चंद्रिका कांति वासकसज्ज पोलिकन्
जॅलिमितो प्रकृति सज्जितमु चेसिन मिसिमि
इम्मुक पान्पुल बव्वळिंचॅ ना सेलयेरु ॥

मरकत-निभ शाद्वल में घुसकर
आस पास के स्थल चमकाकर
दर्शक जन की दृष्टि चुराकर
वसुंधरा के हरित-वसन पर
मौक्तिक-रज की जरी लगाकर
दर विकसित सुम अंजलि में भर
परिमल तन पर भरकर उठकर
पथ रोके तरु-मूल रगड़कर
पके फलों को गिरा गिराकर
फलरस चखकर बल वर्धनकर
सुम भूषण से दिल पुलकित कर
दिशा-वलय स्मिति मे उजला कर
कहीं किसी का रोध न पाकर
स्वेच्छा से कुछ देर विचर कर
धीरे गङ्गा की गति चलकर
वासक-सज्जा-सी शोभा धर
चंद्र-कांति में, मैत्री-निर्भर
प्रकृति की रचित पुलिन-शयन पर
जाकर सुखशायित है निर्झर ॥

शिव-तांडवमु

मूल: श्री पुट्टपर्ति नारायणाचार्य

1. श्रीरमणी ललित कटा
क्षाऽरोपण चंपक प्रसव मालाश्रृं
गारित वक्षुंडु दया
वीरुड्डु परदैव मॅडद् वॅलिंगड्डु गातन् ।।

2. कन्नुल कल्वचूपुलु विकस्वरमुल् गगनांचलंबुलन्
दन्नग धिंधिमि ध्वनुलु दट्टमुलै प्रतिशब्दमीन ना
सन्न गुहांतराळमुल सांध्यल तांडवमाडु दुःखिता
पन्न शरण्यु डीश्वरुड्डु भावमुनन् जिगुरिंचु गावुतन् ।।

3. तलपैनि चदलेटि यललु तांडवमाड
नलल त्रोपुडुल कॉन्नॅल पुवु गदलाड
मॉनसि फालमु पैन मुंगुरुलु चॅरलाड
कनुबॉम्मलो मधुर गमनमुलु नडयाड
कनुपापलो गौरि कसिनव्वु बिंबिंप
कनुचूपुलनु तरुण कौतुकमु चुंबिंप
कडगि मूडव कंटि कटिक निप्पुलुराल
कड्डु पेर्चि पॅदवि पै गटिक नव्वुलु त्रेल
धिमिधिमि ध्वनि सरिद्द् गिरि गर्भमुलु तूग
नमित संरंभ हाहाकारमुलु रेग
आडॅनम्मा! शिवुड्डु!
पाडॅनम्मा! भवुड्डु !!

शिवतांडव

अनु : डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

['शिवतांडव' कवि की अद्भुत विराट कल्पना की मुक्त क्रीडा की कृति है जिस में से मोहक नाद सौंदर्य का प्रवाह बहता है। उसकी कुछ भंगिमाएँ यहाँ प्रस्तुत हैं।]

1. श्री रमणी ललित कटाक्षों की
   उर पर चंपक माल
   सज्जित देव परम दयावीर
   हृदि चमके सब काल ॥

2. नेत्रों की नीलोत्पल दृष्टि विकस्वर गगनांचल में
   फैलाते, धिं धिं ध्वनियाँ गुंजित करते आशांचल में
   आसन्न गुहांतर भागों में रक्तिम संध्याओं में
   तांडव करते दुःख शरण शंकर जागे भावों में ॥

3. सिर पर नभ-गंगा की लहरें करतीं तांडव
   तरंग ताडन से हिलता चंद्र कुसुम अभिनव
   अलकें क्रीडा करतीं मिल भाल समुन्नत पर
   भौंहों में गतियाँ आतीं मधुर मधुर भरकर
   पुतली में गौरी की स्मिति होती प्रतिबिंबित
   वीक्षण होते तरुणाई के कौतुक चुंबित
   विषम नयन से होते अंगारे भी वर्षित
   अधरों पर हास्य भयंकर होते मिल धावित
   धिंधिं की ध्वनि से गर्भ सरित् गिरि के हिलते
   संरंभ अमित औ हाहाकार जगत मचते
   शिव यों नाचा है री!
   भव ने गाया है री!!

4. सकल भुवनंबुलांगिकमुगा शंकरुड्डु
सकल वाङ्मयमु वाचिकमु गाग मृडुंड्डु
सकल नक्षत्रंबुलु कलापमुलु गाग
सकलंबु तन ऍडद सात्विकंबुनु गाग
गणन चतुर्विधाभिनयाभिरति देल्चि
तन नाट्य गरिमंबु तन लोनॅ दा वलचि
नृत्यंबु वॅलयिंचि नृत्तंबु झळिपिंचि
नृत्त नृत्यमुलु शबलितमुगा चूपिंचि
लास्यतांडव भेद रचना गतुल मीरि
वश्युलै सर्व दिक पालकुलु दरि जेर
आडॅनम्मा ! शिवुड्डु !
पाडॅनम्मा ! भवुड्डु !!

5. अंगमुलु गदुर प्रत्यंगमुलुनु जॅदर
इंगुनकु सरिगा नुपांगबुलुनु गुदुर
तत समत्वादुलंतः प्राण दशकंबु
नति शस्तमुलगु बाह्य प्राण सप्तकमु
घंटासदृक्कंठ कर्परमु गानंबु
कंठगान समान करयुगाभिनयम्मु
कर युगमु कनुवैन कनुललो भावम्मु
चरणमुल ताळम्मु चक्षुःसदृक्षम्मु
ऑरवडिग निलुवंग नुरवडि दलिंपग
परवशत्वमुनन श्रीपतियुन् जॅमपॅग
आडॅनम्मा ! शिवुड्डु !
पाडॅनम्मा ! भवुड्डु !!

4. आंगिक सब भुवन बनाकर, सब वाङ्मय वाचिक
नक्षत्र विभूषण सकल बना मन में सात्विक
शंकर यह चारों प्रकार का करके अभिनय
आप स्वयं निज नाट्य कला पर मोहित अतिशय
नृत्य प्रदर्शित कर, झलक नृत्त की दिखलाकर
नृत्य नृत्त को आपस में शबलित दिखलाकर
तांडव लास्य विभेदों की गतियों से बढ़कर
सब दिक्पालों को भी आकृष्ट किया वश कर ॥
शिव यों नाचा है री!
भव ने गाया है री!!

5. फैलते [1]अंग, [2]प्रत्यंग सभी अतिशय बढ़ते
सब [3]उपांग अनुकूल समाँ के समान चलते
समतादिक [4]अंतः प्राण दशक समान चालित
सर्व प्रशंसित [5]बाह्य प्राण सप्तक अतिशायित
सुरणित घंटे के सदृश कंठ का गान निनादित
गाने के अनुरूप बना अभिनय कर युग का
अभिनय अनुरूप दिखा दृग में भाव हृदय का
दृगानुरूप ताल चलता है, चरण लयान्वित
देख उन्हें उत्तेजित परवश विष्णु प्रस्वेदित
शिव यों नाचा है री!
भव ने गाया है री!!

---

1. अंग: सिर, हाथ, काँख, पार्श्व, कमर, पाद
2. प्रत्यंग: कंधे, भुजाएँ, पीठ, पेट, उरु, पिंडलियाँ
3. उपांग: दृष्टि, पलकें, काली पुतली, कपोल, नाक, जबड़े, अधर, दाँत, जीभ, ठुड्डी, मुँह
4. अंत: प्राण: जोर, स्थिरता, समता, चपलता, दृष्टि, श्रम राहित्य, बुद्धि, श्रद्धा, प्रिय वचन, गान
5. बाह्य प्राण: मृदग, ताल, बाँसुरी, गान, सुर, वीणा, घुंघुरू, गायक

6. नगवुले नगवुलै बिगुवुले बिगुवुलै
सॉगसुले सॉगसुलै जूड्कुले जूड्कुलै
तॉलुकारु मॅरुपुल्लु दो बूचुलाडिनट्टु
तॉलिचूलि कन्नॅ कोर्कुलु विच्चुकॉन्न यट्टु
तॉलिसारि रति विंत सॉलपु अम्मिन यट्लु
तॉलि गट्लु पै जॉत्तु बुलकरिंचिन यट्लु
तॉलु संजलो तॅल्वि दूकि वच्चिन यट्लु
मलु संजलो कांति मरलि पोयिन यट्लु
कुलुकु नीलपु कंड्ल तळुकु जूपुलु पूय
घलु घल्लुमनि काळ्ळ चिलिपि गज्जॅलु म्रोय
आडॅनम्मा ! शिवुडु !
पाडॅनम्मा ! भवुडु !!

7. मलक मॅरुपुलु गॉन्नि निलुवु मॅरुपुलु गॉन्नि
सॉलपु मॅरुपुलु गॉन्नि सूदि मॅरुपुलु गॉन्नि
कोल मॅरुपुलु गॉन्नि क्रॉत्त मॅरुपुलु गॉन्नि
चालु मॅरुपुलु गॉन्नि चारु मॅरुपुलु गॉन्नि
प्रक्क मॅरुपुलु गॉन्नि सॉक्कु मॅरुपुलु गॉन्नि
निक्कु मॅरुपुलु गॉन्नि, निंडु मॅरुपुलु गॉन्नि
क्रॅळ्ळु मॅरुपुलु गॉन्नि-तळुकु मॅरुपुलु गॉन्नि
कुलुकु नीलपु गंड्ल तळुकु जूपुलु पूय
घलु घल्लुमनि काळ्ळ चिलिपि गज्जॅलु म्रोय
आडॅनम्मा ! शिवुडु !
पाडॅनम्मा ! भवुडु !!

6. बनकर हँसी ही हँसी, मान ही मान बनकर
शोभा ही शोभा बन, नेह ही नेह बनकर
नव प्रावृट् चपलाएँ आँखमिचौनी करतीं
मानों नव गर्भवती अभिलाषाएँ खिलतीं
पहली रति की श्रांति निराली छाती मानों
उदयाचल पर निकल लालिमा पुलकित मानों
पहली संध्या में चेतनता जगती मानों
दूजी संध्या में कांति लौट पड़ती मानों
मस्त नील नयनों में विकसित दृष्टि चमकती
चरणों में घुँघुरू की लड़ियाँ खूब झनकतीं
शिव यों नाचा है री !
भव ने गाया है री !!

7. वलयाकृति चपलाएँ कुछ सीधी चपलाएँ
मोटी चपलाएँ कुछ अनियारी चपलाएँ
लंबी चपलाएँ कुछ, कुछ नाटी चपलाएँ
श्यमा सम चपलाएँ कुछ अलसित चपलाएँ
तनी हुई चपलाएँ कुछ पूरी चपलाएँ
भँवर मयी चपलाएँ उछल रही चपलाएँ
भर मस्त नील नयनों विकसित दृष्टि चमकती
चरणों में घुँघुरू की लड़ियाँ खूब झनकतीं ।
शिव यों नाचा है री !
भव ने गाया है री !!

8. समशीर्षमु तोड़ समदृष्टि घटियिंचि
समपाद विन्यास चातुर्यमु लगिंचि
वरपताकम्मु दापटि केल नॅस कॉल्पि
वामहस्तंबधो वक्त्रमुग संधिंचि
त्रिपताकमूनि यर्थ पताकमुनु बट्टि
चपल दृष्टुलु दिशांचलमुलनु मोपॅट्टि
धूत मस्तमु चॅल्वु दो बूचु लाडग
वीतरागुलु ऋषुलु विनुतुलनु सेयंग
निलयॅल्ल चॅलुवु रूपॅत्तिनिल्चिन यट्लु
कलयॅल्ल निजमुलै कानुपिंचिन यट्लु
आडॅनम्मा ! शिवुडु !
पाडॅनम्मा ! भवुडु !!

9. भरत मुनि मुंदुगा पद पद्ममुलु बट्टि
"हरहरा" यनि प्रमोदायत्तुडै तूग
तन सृष्टि गर्वंबु तलिगि पोग विरिंचि
कनुललो बाष्पमुलु गट्ट डीत्पडिनिलुव
नावेपु नी वेपु नष्ट दिक्पालकुलु
केवलमु रस मूर्तुलै विश्वमुनु मरुव
तन वेयि कनुलु जालनि बिडौजुडु गौत
मुनिशापमुन कॉरतनु गूर्चि चिंतिंप
नाडॅनम्मा ! शिवुडु !
पाडॅनम्मा ! भवुडु !!

8. समशीर्ष*[1] के साथ निश्चल समदृष्टि[2] लगाकर
समपाद[3] विन्यास का नव चातुर्य दिखाकर
वर पताक[4] दक्षिण कर में सुंदर दिखलाकर
वामहस्त अधो वक्त्र के समान दिखलाकर
त्रिपताका[5] भरकर अर्ध-पताका[6] दिखलाकर
चपल दृष्टि की आशाओं में टेक लगाकर
धूत शीर्ष[7] के अभिनव आँखमिचौनी करते
वीतराग ऋषि गण कर जोड़ विनतियाँ करते
सारी पृथ्वी धर सुंदर रूप खड़ी मानों
स्वप्न सभी सच बनकर दीख रहे हों मानों

शिव यों नाचा है री !
भव ने गाया है री !!

9. सबसे पहले भरत मुनि चरण कमल पकड़कर
झूम रहा प्रमुदित मन होकर कहते "हर हर" ।
ब्रह्मा निज सृष्टि गर्व के खंडित होने पर
आँखों में अश्रु भरे शिथिल देह मन होकर ।
रस मूर्ति बने आठों दिक् पालक इधर उधर
व्यक्तित्व विलीन खड़े सारा विश्व भुलाकर ।
निज सहस्र नेत्रों के पर्याप्त न होने पर
चिंतित इंद्र गौतम शाप में कमी मानकर ॥

शिव यों नाचा है री !
भव ने गाया है री !!

---

* 1 से 7 तक का विवरण कृपया इस कविता के अंत में देखें

10. हरियॅ हरुडै, लच्चि नग जातयै, सरिकि
सरि तांडवमुलाड सम्मोदरूषितुलु
हरुनि लो हरि जूचि, हरियंदु हरु जूचि
नॅरवेदि देवतलु विस्मितुलु मुनुलॅल्ल
रधिगतानंद भावावेश चेतस्कु
लॅद विच्चि युप्पॉङ्गि, यॅगिरि स्तोत्रमु सेय,
भेदवादमुलॅल्ल प्रदिलि पोवग सर्व
मेदिनियु नद्वैतमै प्रतिध्वनुलीन
नाडॅनम्मा ! शिवुड्डु !
पाडॅनम्मा ! भवुड्डु !!

11. नव जटा पटल संध्याकाल वारिदां
त विकास चंद्र मंद्रातपार्द्र शरीर !
नग कन्यका नेत्र युगळ निर्यत्कटा
क्ष गणता पिंछ पिंछाधीन गुरु वक्ष !
निगम दासी समुन्निद्र साहो निना
द ! गणनी कृत नैक तार हार विलास !
भूतेश ! भूत भावातीत ! " यनि पलिक
स्तोत्रमुलु पठियिंप चोद्यमुन वैकुंठु
डाडॅनम्मा ! शिवुड्डु !
पाडॅनम्मा ! भवुड्डु !!

10. हरि हर बनकर स्थित लक्ष्मी नग-जाता बनकर
समान तांडव करते प्रमुदित रोषित होकर
हर में हरि, हरि में हर लख देव सभी विस्मित
मुनिगण सब होकर चिन्मय आनंदावेष्टित
उमंग में भर स्तुति करते मुक्त हृदय होकर
एक अद्वैत गुंजित भेदवाद भुलवाकर
शिव यों नाचा है री !
भव ने गाया है री !!

11. नव जटा पटल संध्या वारिदांत में विकसित
शशि के मंदातप में आर्द्रदेह से विलसित
नगकन्या के नेत्रयुगल से निकली चितवन
करती आक्रमित गुरु वक्ष तव शिखी-पंख बन
अगणित तारक हारोंसे विलसित हे भव ! हर !
स्तुति करते हरि " हे भूत भावातीत ! " कहकर
शिव यों नाचा है री !
भव ने गाया है री !!

12. पद्मामनोब्ज यावक पुष्पित शरीर !
पद्म सुंदर नेत्र ! भावांबरातीत !
मायासती भुजा परीरंभाऽवि
षय विवेक ! हृषीकसंचयाऽधिष्ठात !
शौरि ! नी तेजमे संक्रमिँचनु नन्नु
पूरिँचॅ तांडवमु पूर्ण चित्कळ तोड
ननि निटालमुनंदु हस्तम्मुलनु मॉगिचि
विनतुडै शंकरुड्डु विष्णुवुनु नुतियिंचि
याडॅनम्मा ! शिवुड्डु !
पाडॅनम्मा ! भवुड्डु !!

---

12. पद्मा के मनो कमल जावक पुष्प सुशोभित तन
हे पद्म सुंदर नेत्र! हे भावातीत गगन!
माया स्त्री परिरंभण में तव विवेक अविचल!
तेरा शासन करते स्वीकार हृषीक सकल।
शौरि! तेज तेरा ही संक्रमित हुआ मुझमें।
भर दी संपूर्ण चित्कला मेरे तांडव में!"
ललाट में कर कमलों को मुकुलित कर शंकर
स्तोत्र गान करते श्री हरि का विनीत बनकर ॥
शिव यों नाचा है री!
भव ने गाया है री !!

आठवें पद की संख्याओं का विवरण :—

1. समशीर्ष: नीचे न झुकाकर, ऊपर न उठाकर बराबर रखा सिर।
2. समदृष्टि: अपलक दृष्टि।
3. समपाद: साधारण रूप से खड़ा रहना।
4. पताक: सब उँगलियों को फैलाकर, अंगूठे को तर्जनी की अंतिम गाँठ पर लगाकर दिखाना।
5. त्रिपताका: पताक हस्त में अनामिका को झुकाकर दिखाना।
6. अर्ध पताका: पताक हस्त में छिगुनी को झुकाकर दिखाना।
7. धूत शीर्ष: दायीं और बायीं ओर हिलनेवाला सिर।

सातवाहन प्रशस्ति

मूल : श्री मधुनापंतुल सत्यनारायण

1. सातवाहन नरपाल शकवसंत
संततोदयमुन विकासम्मु वडसि
तनुवु सॅडि याकु राल्चिन तॅनुगु तोट
यमृत मयमुग चिगिरिंचि यंदगिंचॅ ॥

2. चॅट्टुन कॉक्कॅडे विडि कुशिंचिन यांध्रुल नेक दृष्टि लो
बॅट्टुचु नॉक्क लाट नडपिंप बलंतुलु सातवाहनुल्
पट्टमु गॉन्ननाडु करवा? भरतोर्पिर चॅक्कुटद्दमुल्
मुट्टि तॅनुंगु रेडु वलपुल् मॉलपिंचॅ प्रपंचकांतकुन् ॥

3. रापुलु वॅट्टि पैबडुगरासुल मोसुलतो बॅकलिच लो
लोपलि चूपुनं प्रभुत लो नॉक मॅर्वडि मीरगा शक
स्थापन चेसि नट्टि जग जाणलु तॉल्लिटि शालिवाहनो
र्वी पतुलॅन्न नांध्रुल चरित्रमुनंदलि मुख्यपात्रमुल् ॥

4. तॅनुगॅल्लन् बॅररॅड्ल येत्बडि पराधीनत्व दुर्वागुरा
कुलितबै वॅललेनि यात्म गुण शक्तुल् रक्तुल् वंतमै
बलिगानिच्चिन दॅन्नडो ; यदि सहिंपं गल्गुने? विक्रमो
ज्ज्वलुडौ नांध्रुडु सातवाहन महीश ख्यात वंशीयुडुन् ॥

5. मगध राज्येंदिरामणि स्थगित मकुट
मात्म वशमुन नुंड देशांतरमुल
कीर्तिवल्ली मतल्लि व्राकिंचॅ नाडु
सातवाहन वंश वृक्ष प्रशस्ति ॥

सातवाहन-प्रशस्ति

अनु: श्री रापर्ति सूर्यनारायण

1. जीर्ण-शीर्ण च्युतपर्ण रहा तब आंध्रोद्यान अवर्ण ।
किसलय-कुसुम-विसर संयुत अब चमका धरे सुवर्ण ।।
पावन-सौभाग्योदय-भासित था आंध्रोर्वी-फाल ।
सातवाहनों के युग का वह ऋतुराजोदय-काल ।।

2. व्यस्त कृशित आंध्रों को करके एकाशय द्युतिमान ।
ले चले सातवाहन करके एक सूत्र-बंधित बलवान ।।
भारत-भू के कपोल छूकर आंध्रोर्वीतल-नाथ ।
जगती-विलासिनी-मन में थे प्रेम जगाते साथ ।।

3. बहुत सताया विदेशियों ने भारत, कर अपमान ।
शालिवाहनों ने उन्हें भगा प्रभुता धरी समान ।।
संवत् अपना चलाया विशद बल से हरा अमित्र ।
पात्र सातवाहनों का भरे चमका आंध्र-चरित्र ।

4. आंध्र महीतल परहस्तंगत विपुल-यातना-ग्रस्त ।
स्वगुण-शक्ति-रक्ति की दिये बलि कब का था अतित्रस्त ।।
कौन आंध्र सह सकता जो था घन विक्रम वर्धिष्णु ।
सातवाहनों का कुलवर्धक जो हो शुभ-वर्तिष्णु ।।

5. मगध-राज्य-लक्ष्मी-स्वर्ण-मुकुट स्ववश किये सविधान ।
जग में कीर्ति-लता फैलाई दिखला निज अभिमान ।।
सातवाहनों के कुल के सुरतरु की हुई प्रशस्ति ।
जग भासित करती थी इनकी महा-प्रताप-गभस्ति ।।

6. द्वीप द्वीपमुनन् यशोलतलु हत्तॅन् मौर्यसाम्राज्य ल
क्ष्मी पल्यंकिक नॅत्ति मोसिन नृपश्रेष्ठुंडशोकुंडु ; त
द्भूपालोत्तमु क्रिंदि राजुलयि यांध्रुल् शात्रवानीकमुन्
रापाडिंचिरि यौरसंबगु स्वतंत्रत्वंबु गापाडगन् ॥

7. पाराधीन्य पिशाची दारुण हुँकारमुलकु दलगि मनमुलं
दूरडि पोयिन व्रतुकुल् चेरिंचि कॉन्नट्लुलु संतसिंचिरि तॅलुगुल् ॥

8. आमरुगैन कालमुन यंदनगा बहुपूर्वमंदु दु
र्दाम पराक्रमंबुन पर ध्वजिनी भटपाळि त्रोसि रा
जै मन देश मेलिन दयाळुवु ‘ श्रीमुख ’ भूमि पाल सु
त्रामुन कॅल्ल वेळल कृतज्ञत दोसिलि यॉग्गि म्रॉक्कमे !

9. पश्चिमाशा वीथि पारु ‘ नरेबिया ’
वारिधि दाकनिंडारु तॅलुगु
साम्राज्यमुनु बॅञ्चॅ ; सरिलेनि हैदरा
बादु वीरारंदु वच्चि कलसॅ ।

6. मौर्यराज्य-लक्ष्मी-शिबिका का भार सँभाल अशोक
द्वीप-द्वीप में यशोलताएँ रोप चले सुश्लेक ॥
उन नरवर के अधीन हो रिपु-कीट बना विभ्रांत
आंध्रों ने मसले स्वतंत्रता-फल पाने अश्रांत ॥

7. निशित पराधीनता के अदय हुंकारों को टाल
अप्रतिहत बल-साहस से निज-मन धीरता सँभाल ॥
खोया जीवन पानेवाले के सम हर्षित आंध्र
एकत्रित दृढ आंध्र-शक्ति से लसित चले निस्तंद्र ॥

8. पर-पालन के उस युग में थे आंध्र हुए निष्काम ।
उन्हें बनाकर कर्मी चमके श्रीमुख नृप-सुत्राम ॥
पर-केतन पर-शासन-सह तब फेंक दया का धाम
राज्य यहाँ करते थे, उनके हम कृतज्ञ कृतकाम ॥

9. श्रीमुख का यह काम देखिये! आंध्र-देश का मान
बचाया उन्होंने जब वह था सहता घन अपमान ॥
पश्चिम अरबाब्धि से सटाकर फैलाया साम्राज्य ।
बीरार हैदराबाद मिला उसको किया अभाज्य ॥

10. नॉक्कडॉक्कड्ड निद्दलु दक्कि चूचुचुनुंड
चिक्किन साम्राज्य मक्कजमुग
नॉडलु चेसि शिरस्सु लुपिंचि पगट्टुगा
बरगॅ श्रीमुख सार्वभौम विभुत ;

11. अट्टलुराष्ट्र प्रजावळिकमृतभिक्ष
निडिन या तॅलगु तॉलि दॉर यड्डुगुजाड
लंदिन तरुवाति सातवाहन नृपतुलु
नालुगैदु शताब्दमुलेलि रवनि ॥

10. इस विधि पाकर एक एक कर आस-पास के प्रांत ।
आंध्र राज्य बन विस्मय-कारक पुष्ट हुआ अश्रांत ॥
श्रीमुख की यह प्रभुता थी नित अरि-अश्रांति-पदार्थ ।
वीर सिर हिलाते थे उनको मान किरीटी पार्थ ॥

11. श्रीमुख चले दिये आंध्रों को विबुध-सुधा का दान ।
सातवाहनों के पूर्वज वे आंध्र-शक्ति वर मान ॥
तत्पथ ले आगे थे उनके वंशज करते राज ।
दुर्हृद-भीषण, वरगुण-भूषण धर वैभव की साज ॥

मनोरथमु

मूल : श्री बोयि भीमन्न

पुव्वुल कंटे लॅक्ककु मुळ्ळे ऍक्कुव
ई ना गुलाबि तोटलो !
अंदुकनि
मुळ्ळ तोट अननना दीन्नि ?

कोयिळ्ळु नालुगे, कीट्टकालु लक्षलु
ई ना रसाल वनं लो !
अंदुकनि
परित्यजिंचि पोना दीन्नि ?

वसंतं ऒकटे, तक्कु ऋतुवुलु ऐदु
ई ना मधुरोद्यानं लो !
अंदुकनि
पॅरिकि पारवॅय्यना दीन्नि ?

लक्ष मुळ्ळ पॉद्लुनि भरिंचि
ऒक्क तोटैना पॅञ्चुकॉन्दां !
लक्ष अपस्वराल्नि सहिंचि
ऒक्क पाटैना पाडुकॉन्दां
लक्ष कोरिकल्नि परिहरिंचि
ऒक्क माटैना कलुपुकॉन्दां ॥

मनोरथ

अनु: श्री एम. रंगय्या

सुमनों से शूल ही अधिक हैं
मेरे इस गुलाबी उपवन में ।
इसीलिए—
क्या इसे शूलों का उपवन कहूँ ?

कोयल हैं चार, कीट लाखों हैं
मेरे इस रसाल-उपवन में ।
इसीलिए—
क्या इसे छोड़ चला जाँऊ ?

वसंत है एक, अन्य पाँच मौसम हैं
मेरे इस मधुरोद्यान में ।
इसीलिए—
क्या इसे उखाड फेंक दूँ ?

लाखों कंटीली झाडियों को सह
एक उपवन का ही सही निर्माण करेंगे ।
लाखों अपस्वरों को सह
एक गीत का ही सही गान करेंगे ।
लाखों अभिलाषाओं को तज
एक बार ही सही मिलेंगे ।।

आवाहनमु

मूल: श्री पाटिबंड माधवशर्मा

1. अदि परिणद्ध युष्मदधरामल रक्तिम कादु सुम्मु, ना
हृदय कटाह निस्सरदसृक्परिकल्पित वेपनमु ; अ
य्यदियु भवद्दृगंचल महः प्रभगादु मनोज्ञराग सं
पदमलमैन ना हृदयपंकज रक्तिम गानि नॅच्चॅली !!

2. ए यपराधशिक्षयनि ई यवमानमु सैपुमंटि ? नि
र्मायिकमैन मुग्धहृदयंबुन निन् गयिसेसिनंदुका ?
मोयग लेनि प्रेम भरमुन् द्विग म्रिंगॅड्डु नेर्पु लेक शो
भायुत मैन नीवदन पंकजमुन् स्पृशियिंचि नंदुका ?

3. तीयनि प्रेम भिक्षकयि तेपकु तेपकु नी गृहांगण
च्छायल नाश्रयिंचुटकु जालितिगाक ; अकारण क्रुधा
हेयमुलैन मूक परिहेळन लोर्चुटकुन्, वृथा व्यथा
दायक निष्ठुरोक्तुल वितानमु सैपनु गादु नॅच्चॅली !!

4. कलवु मुहूर्तमुलु तॉलुत कंटि जलम्मुललोन नीवु नन्
गलचि करंचि कैवसमुगा नॉनरिंचुक पोयिनट्टि रो
जुलु, कृताधिकत्वमुलु चॉप्पड पूत पराकुलूनि नी
पिलुपुल नेनि चॅवि बॅट्टनि रोजुलु गूड नॅच्चॅली !!

5. ऍरुगुदु नेट रेपट भ्रमिंतुवु मद्भवनांगणस्थलिन् ;
दरदरविंद सुंदर पद द्वयि कंदुनॉ यंचु मुंदुगा
परपुलुगा नमर्चितिनि पल्लवपेशलमैन नायॅदन् ;
वॅरवक सागि रम्मु विलपिंपदु, व्रीलदु, वाडिपोवदुन् !!

आवाहन

अनु: डॉ. इ. पांडुरंगाराव

1. आचर्चित निखरी वह लाली नहीं सखी तेरे अधरों की
वह तो मेरे दिल-कड़ाह से निस्सारित परिलिप्त रुधिर की,
वह भी तेरे नयनांचल की द्युति महीयसी नहीं सखी री।
रागमनोहररंजित मंजुल मम हृदय कमल की लाली री!

2. अपराध बता दे क्या मेरा जिसके बदले मिला अनादर।
क्या यही कि की पूजा मैंने सरल तरल हृदय में बिठाकर?
बस यही दुर्वह प्रेम भार वह मैं था निगल नहीं पाया।
सुरुचिर मुख सरसिज छूने का लोभ प्रबल संभाल न पाया॥

3. सजनी! तेरे मधुर प्रेम की भीख मांगने घर आया था
बार बार चक्कर काटा था सुनो सखी! किंतु न आया था
तेरे नीच मूक उपहासों का नीरव ताड़न सहने को
या व्यर्थ व्यथा-दायक निष्ठुर बातें सुनकर चुप रहने को॥

4. एक समय था तेरे आँसू देख हृदय मम पिघला करता
विकल हृदय यह विवश निरंतर तेरा ही रह जाया करता
वे भी दिन थे मैं अपने को बड़ा समझ परवाह न करता
मुझे प्यार से तू पुकारती मैं गर्वीला न सुना करता॥

5. मुझे पता है आज न तो कल आओगी ही तू घर मेरे।
इस आँगन में न कहीं उपड़ें चरण सरोरुह कोमल तेरे।
सोच यही पल्लव मृदुल हृदय-पांवड़ा बिछाया तव पथ पर।
आ जा निर्भय, तनिक न होगा, विकल शिथिल दब यह कुम्हलाकर॥

6. ई विमल प्रभातमुन ई कृपणात्मक सौध वीथिकिन्
देवतवोलॅ नीवु चनुदॅञ्चॅडि वेळ भवत् पदद्वयी
पावन निक्वणांतमुलु वैदिक ऋक्कुल नालपिंचॅ ; शो
भावरणीय वक्त्रमुन भासिलॅ मुग्धमुलै युषस्त्विषल् ।।

7. अविरळ धाळ धळ्य हृद्यंगम सौरभमिद्दि देवता
भवनमु तत्प्रसाद परिपालित चित्तमु तोड शांति वै
भवनिभृतांत रंगमुन वर्धिलु मिच्चट कोटि वर्षमुल्
भवभय विस्मृति प्रदमपाय निबर्हण मिद्दि नॅच्चॅली ।।

---

6. इस कृपणात्मक हर्म्य मार्ग में विमल उषा के मधुमय क्षण में
आई जब तू दिव्य रूप में पावन पद निक्वण के स्वन में
वेद ऋचाएँ बोल उठीं, तब पग पग पर उस मधुर गमन में
मुदित उषा की उदित प्रभाएँ चमक उठीं कमनीय वदन में ॥

7. अविरल उर्मिल सुरभि मनोहर यह सुर वासित देवतायतन
इस प्रसाद से मन शासित कर आ जा यह चिर शांति निकेतन
युग युग तक रहना इसमें यह अंतरंग की निधि बनता है।
विपदा को यह विफल बनाता, भवभय को भुलवा देता है।

विरह गोपि

मूल: श्री पाटिबंड माधवशर्मा

1. श्रीकरमै, मुहु : परवशीकृत गोपवधूकमै सदा
लोकि समस्त लोकमयि, लोकविमोहनकृद्विलोकमै
प्राकट मैन नी वदन पंकजलक्ष्मिकि रक्षयैन मा
केकिशिखा कलापमुनर्कॅत्तद कप्रपुमंगळारतुल् !

2. नीवु सुधानिधानमवु, नीमुरळी मृदुगानमुन् सुधा
स्रावि ; सुधा मयम्मु गदरा निखिलम्मुनु निन्नु गूर्चिनन् ;
स्थावर जंगमात्मक विशाल जगान त्वदीय दिव्य गा
नावशमै करुंगनिदि मुन्नदि लेदु गदा जगत्प्रभू !

3. यामुन निम्नगातरळहारि तरंगमुलंदु वालुका
सीमललो भवम्मॅडमु चेसुक शारद दीर्घ यामिनी
याममुलंदु रास रचनार्पित जागृति ने मनोहर
श्यामु दनिंचिनानॉ भरमय्यॅड्डु ना स्मृति मोहनाकृती !

4. नी ललित स्वरूपमु पुनीत तमाल महीज शाखलन्
व्रेलॅड्डुनाट तॅच्चि पदलिंचिति नाहृदयम्मुलोन ; गो
पालक बाल लालन कृपाळुलु नाटिकि नेटिकीश्रवो
गोळमुलंदु म्रोगु निविगो भवदीय मनोज्ञगानमुल् ।

5. म्रागनुवड्ड जालु गदरा यॅदुरय्यॅदु वंशिका सुधा
रागमुतोड पिंछ परिरंभित चूडमुतोड भागुरो
भागमुतो लयानुगुणपादयुगी गमनम्मुतोड ; ई
यागडमेटिकोयि ? भरमय्यॅड्डु मोहमु मोहनाकृती !

गोपिका-विरह

अनु: डॉ. इ. पांडुरंगाराव

1. मोरशिखा श्रीयुत तव पंकज मुख शोभा का रक्षा-बंधन ।
उसकी मैं उतारती मंगल मय घनसार आरती क्षण क्षण ।
व्रजललनाएँ छवि निहार कर बार बार विवश हुई जातीं ।
देख सदा वह सब लोकों को निज शोभा से मुग्ध बनाती ॥

2. सुधा धाम तू, मुरली तेरी मंजुल गीत सुधा की धारा ।
तुझसे मिलकर हे जगत-प्रभो सुधा पूर्ण बनता जग सारा ।
सकल चराचर विपुल जगत में कण कण तव संगीत भरा है ।
तेरे दिव्य गान में अग जग मय सब जाती पिघल धरा है ॥

3. दीर्घयामिनी शारदनिशा में यमुना-लहरों से क्रीड़ा कर
भव से दूर विभोर रास में, पुलिनों पर तन्मय हो होकर
जाने किसको रिझा लिया था, था वह कौन श्याम मानसहर
स्मृति उसकी व्यथित सदा करती मनपर भार रूप बन बनकर ॥

4. तेरा रूप मनोहर पावन तरु तमाल में झूल रहा था
उसको लाकर मैंने अपने हृदय निलय में बसा लिया था,
तभी गोप बालों की पुलकें ललित हसित उस प्रणयायन की
अब भी सुन पड़ती हैं तानें कानों में तेरे गायन की ॥

5. झपक पड़ीं पलकें जैसे ही छलक पड़ी आगे छवि तेरी
वही बाँसुरी सुधा रागिनी लयनिबद्ध वह पद गति सारी
उर कांति युत, मयूर पंखसे परिरंभित वह चोटी लघु सुंदर
मोह भार अधिक हुआ जाता नटखट मत बन श्याम मनोहर !

6. विश्वमुतल्लक्रिंदयि तपिंचियु पॉन्द्गरानिदे सुधा
निश्वसन प्रपूतमगु नीमुरळिन् पॅदविं दगिल्चि यैं
द्राश्व मनोज्ञरिंगण शनैगमनम्मुन वच्चि यॉक्किना
गस्वरमूदि जीवभुजगम्मुनु पट्टुकपॉम्मु मोहना !

7. गाटपुमोह माचिकॉनगा दरिगानक नीवुनेनुमु-
च्चटलाडुकॉन्चु दिरुगाडि कानलो तमालपुन्
वाडुल वॅण्ट नीवुकनवत्तुवॉ यन्न दुराशपॉण्टॅ नै
शाट पथम्मु वट्टि तिरुगाडुचुनुंटि गदा जगत्प्रभू !

8. बारुलु गट्टि पक्षुलु नभस्थलि नीडपथम्मुवट्टे ; अं
भारव घूर्णितम्मुलु गवार्भकमुल्निजकोष्ठ मार्ग सं
चारमुवट्टॅ ; नी पॉद्दल चाटुन नीकयि वेचियुन्नना
नीरव विग्रहम्मटुलने शिलयय्यॅ तमम्मु पैकॉनॅन् ॥

9. वेणुवु मोवि मोपि यरविंददळा मलिनांगुली गतिन्
तेनियलूरु दिव्य फणितिन् बलिकिंपुमु मंद्र मध्यम
स्थानक्रम प्रकारमुन तारमुनंट त्वदीय गान सो
पानमुलंटि पॅट्टुकॉनि प्राकॅद नाकमुदाक नो प्रभू !

---

6. तप तपकर जीवन भर वसुधा पा न सकी जिस स्वर लहरी को
निकले जिससे सुधा सांस बन अधरों पर धर उस मुरली को
आ जा मोहन उच्चैश्रव पर चढ़ मंदमंद गति से छिपकर
नागस्वर रागिनी एक बजा ले जा जीव-भुजंग पकड़कर ॥

7. मोहमयी दुर्दम वांछा का पार न पाकर, प्रेरित होकर
जिस वन में हम घूमे पहले क्रीड़ा करते पुलकित होकर
यहीं कहीं पाऊँ तुमको फिर तमाल तरुओं की पाँतों में।
यही लालसा लेकर मन में घूम रही रजनी-पंथों में ॥

8. चिड़ियाँ अपने नीड़ पहुँचने नभ चली कतार बाँधकर
रंभाते बछड़े गायों के लौट रहे अपने गोष्ठों पर
पर मेरी प्रतिमा यह नीरव इस झुरमुट के सन्नाटे में
बाट जोहते बनी शिलामय, घेर लिया तम ने इतने में ॥

9. अधर बाँसुरी पर नर्तित कर शतदल पंखुरियाँ-अंगुरियाँ
दिव्य गान मधु बरसे जिनसे मंद्र मध्य स्वर तान लहरियाँ
सुना सुनाकर धीरे धीरे ले जा मुझको तार महालय
तव संगीत सोपान पर प्रभु! चढ़कर पहुँचूँगी त्रिदशालय ॥

वसंत ऋतुवु

मूल: श्री पैडिपाटि सुब्बराम शास्त्री

1. आद्यंतमुलु लेनियट्टि कालम्मुनु
    गादितो मॉदलुगा गलुगु ऋतुवु
वासंत नवरात्रवर्धित कल्याण
    रमणीय सुषमवॅलार्चु ऋतुवु
फल पुष्पनिचय संभावना गरिम भू
    सुरकोटि बरितृप्ति बरचु ऋतुवु
पूर्णिमास्नानाच पुण्योपलब्धिकै
    अंजलो मॉदटिमॅट्टैन ऋतुवु
नातिशीतल नात्युष्णताति रम्य
मगुचु म्रोड्लु चिगुरिंचु सॉगसुलॉलिकि
सकल जन हित मैन वसंत ऋतुवु
वच्चॅ नॉक कोटि दौ शतपत्र शोभ ॥

2. कनुविंदु नगुचु बूचिनदशोक सुमम्मु
    रमणीमणी पाद लाक्षवोलॅ
मदिनिंपुचुनु बूचिनदि कर्णिकारम्मु
    सॉम्पैन चॅविकम्म कॅम्पुवोलॅ
चॅन्नुगा विरिय बूचॅनु पलाश सुमम्मु
    खंडितापांग वीक्षणमुवोलॅ
चॅलुवम्मु लॉलिकि पूचिन दॅरॅगोरिंट
    जेवुरिंचिन चेडॅ चॅक्किलिवलॅ
आदि ऋतुराजु विश्वविख्यात कीर्ति
दर्पकुनिकैन प्राणमित्रमु, वसंतु
डधिकतेजस्वि मिगुल सहायपडग
तुंटविल्तुड्ड पॅद्दयोधुड्डग निलचॅ ॥

वसंत ऋतु

अनुः डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

1. आद्यंत रहित काल चक्र में *उगादि से चलती ऋतु ।
वासंती नवरात्रि में बढ़ती विवाह शोभा की ऋतु ।
फल पुष्प निचय के गौरव से भूसुर आनंदद ऋतु ।
पूर्णिमा स्नान पुण्य प्राप्ति की पहली सीढ़ी यह ऋतु ॥
नाति शीत नात्युष्णता से अतिरम्य बनी शोभित ऋतु ।
फूटी-पल्लव-सुषमा शोभित होकर आयी मधु ऋतु ।
सर्वजनों का हित संधायक सौंदर्य लिए मधु ऋतु ।
शत पत्र कोटि की शोभायुत होकर आयी मधु ऋतु ॥

2. रमणी पद लाक्षा ज्यों नेत्रोत्सव कर अशोक विकसित ।
कर्णाभूषण-मणि जैसे मन भर कर्णिकार पुष्पित ।
विकसित पलाश शोभित खंडितापांग वीक्षण जैसे ।
सुंदर लाल कुरंटक फूला रक्तिम कपोल जैसे ।
वह ऋतुराज प्रथम विश्वविश्रुत काम का प्राण मित्र ।
वसंत का बल पा, काम खड़ा लेकर वीर चरित्र ॥

* आंध्र के नव वर्षारंभ का दिन

3. मधुलिहम्मुन किष्टमैन मानिन नेमि
　　　　कमनीयमुग चंपकम्मु पूर्च
मधु वृक्षमुनु बोलि मनिन मानिन नेमि
　　　　रॅम्म रॅम्मनु वेपकॉम्म पूर्च
कमलम्मुनकु बोलिकयिन मानिन नेमि
　　　　युल्लम्मु ललरिंचि मल्लॆ पूर्च
ह्लादगीतम्मु दोह्दमैन काकुन्न
　　　　गुम्मुगा ना प्रेंकणम्मु पूर्च
षड्तुवुलनगुनिदि विशेषत गडिंचि
पुष्पमयशोभसिरु लॅग बोसॅनंचु
नादि ऋतु वैभवम्मु बॅल्लुदि पलिकॅ
कॉम्म कॉम्मनु जेरि पुंस्कोकिलम्मु ॥

4. चलितग्गि चिरुचॅम्मटलु पोयकामिनुल्
　　　　कॉलकुलन् लॅस्सगा जलकमाडि
तरचु नत्तरुवुचे सुरभी कृतम्मैन
　　　　वलिपॅम्पु चॅङ्गावि वलुवदाल्चि
कम्म तावुल नीनु गंधचर्चनुजेय
　　　　चॅंदुरुगा लोनि कॅंचॅल सडल्चि
विरिवीवनलतोड विसरगा रगिलिन
　　　　मधुर तापम्मुनन्मनसु चॅंदरि
पिकमुरॅट्टिंचि कूयुकूतकुनु बॅदरि
मदमुरॅञ्चिन तुम्मॅद रॉदल कदिरि
मनसुदिगुलैन नुद्यानवनमुलंदु
वेचि युंदुरु राककुन् ब्रियुल कॉरकु ॥

---

3. भौंरे को पसंद हो, ना हो, चंपक फूला सुंदर ।
मधु तरु समान जिये या नहीं, नीम सुविकसित सुंदर ।
कमल समान रहे या न, मनहर फूली सुचमेली ।
ह्लाद गीत दोहद हो या हो न, प्रियंगु लता फूली ।।
कोकिल बोली वसंत शोभा
वृक्ष की डाल डाल ।
कि ऋतु चक्र ने विशेष पायी
सुम शोभा इस काल ।।

4. ठंड हुई कम घर्म बिंदु झांकने लगे तो
मत्त कामिनियों ने सरोवरों में स्नान कर ।
इत्र की सुगंध से बार बार सुरभीकृत
सुंदर दुग्ध फेनोपम साड़ी धारण कर
अंदर के कंचुक बंधन को ढीला करके
वक्षोजों पर शीतल चंदन चर्चित कर
फूलों के पंखों से निकलनेवाले पवन से
बढ़ते मधुर ताप से मन घबराकर ।।
चौंक युवतियाँ सुन पिक अलि की
कूक औ झंकार
उद्यानों में बाट प्रियों की
जोहतीं विरह भार ।।

सुधा बाल

मूल : श्री शंखवरं राघवाचार्य

ओ सुधा बाल! ओ सुधा बाल! ओ सुधा बाल!
ओहो ना बाल! ओ सुधा बाल!
रा, पूल पल्लकी निलिपि स्वर्गान, स्वप्नमार्गान
घलु घल्लुमनि गज्जॅ पलुक, नी हृदयमॉलुक
ना वलपु गिलक, ना वलुपु गिलक।

कर्पूर पांडुर कपोल अधर प्रवाळ मधुर प्रमील
हृदयांतर स्वप्रशील, ओ सुधा बाल!
रा, पूल पल्लकी निलिपि स्वर्गान, स्वप्न मार्गान।
जडलोन मुडिचेनु चविति नॅलवंक, ऍवरिके शंक?
एकांत चिर मौनवाणी चॅरवीडि रानी
कवन त्रिवेणि! कवन त्रिवेणि!
वॅन्नॅलल रेल जलदाल वॅलुगु दाराल कट्टि उय्येल
पाडॅदनु ना वलुपुजोल ओ सुधा बाल!

सुधा-बाला

अनु: डॉ. चावलि सूर्यनारायण मूर्ति

हे सुधा बाला ! हे सुधा बाला !
सुधा बाला ! मेरी सुधा बाला !
आ, पुष्प पालकी स्वर्ग में रोककर
स्वप्न मार्ग से घुंघरू छनछनाकर
आओ सखी ! हृदय अपना उड़ेलकर
प्रेमचक्र मेरे हे, मम प्रेम चक्र !

शुभ्र कपोलों की पांडुर शोभा फैलाते
अधर प्रवालों की मोहक लाली छिटकाते
हे मम मधुर प्रमीला !
हृदंतर स्वप्न शीला !
अहे सुधा बाला !
पुष्प पालकी रोक स्वर्ग में
स्वप्न के मग से आ हृदय में
चौथ-चंद्रमा जूड़े में लगाऊँ
कौन करे शंका ?
एकांत चिर मौन वाणी
कारा छोड़ आने दो काव्य वाणी
मेरी कविता त्रिवेणी !
राका निशाओं के
चमकते जलद् धागों के
झूले में झुलाऊँ
प्रेम-लोरी गा सुलाऊँ
अहे मेरी सुधा बाला !

नी मनो मकरंदमे अमृतभिक्ष, नाकु रस रक्ष,
तॅलुसुको मनसु पॉलिमेर नी वॅलुगुजीर
प्रेम ध्रुवतार, प्रेम ध्रुवतार
नुरुगुलारनि मधुरहाल ईवॅ सुमबाल
हृदय मधुशाल सर्वमिपुडानंद लील ओ सुधा बाल !

एदलोनि पदमुतो कदलॅ नीकालु, करगॅ लोकालु
गंधर्वुले कलसि पाड, अप्सरस लाड
परवशमुतोड, परवशमुतोड
ई जगति नीलास्यशाल मृदुशाद्वलाल जलधिकॅरटाल
कनिपिंचु नीनृत्य खेल ओ सुधा बाल !

तेरा मन मकरंद ही
मेरे लिए अमृत भिक्षा है
रस की रक्षा है
जानो तेरे प्रकाश की रेखा
मेरे मन की सीमा है।
प्रेम की ध्रुव तारा
फेन युत मधुर हाला
हृदय की मधु शाला
तू ही है हे सुम बाला!
अब सब कुछ आंनद्लीला
हे सुधा बाला!

हृत्पद के साथ चला तव पद।
गंधर्वों ने गाया।
अप्सराएँ नाच उठीं।
परवश होकर लोक द्रवित
यह जगत तव लास्य की शाला
कोमल शाद्वल जलधि तरंगों में
लक्षित तेरी नर्तन क्रीड़ा
हे सुधा बाला!

ఈ భువనముల మౌన హృదయ మె తెరచి చూచి మైమరచి,
మనసుతో మనసు పెనవేసి రసగంగ పోసి
చేసెదను కాశి! చేసెదను కాశి
నా అన్నపూర్ణాలయాల వెలిగించ వేల నీ సుధా జ్వాల
శతకోటి నీరాజనాల ఓ సుధాబాల!

కదలి రావే లోని మాయ కరగింపనా హృదయ శంప!
నాకునీ అభయ కర మిచ్చిచ నా మనసు లచ్చిచ,
చూడవే వచ్చిచ చూడవే వచ్చిచ!
నా ముద్దురవల జవరాల, ఆణి ముత్యాల లోని రతనాల
చిత్తసాగర మథన లోల ఓ సుధాబాల!
కదలి రావే లోనిమాయ కరగింప, నాహృదయ శంప!

इन भुवनों का मौन हृदय
उद्‌घाटित कर
लख सुधबुध खोकर
मन से मन लिपटा कर
रस की गंगा भरकर
काशी बनाऊँ, काशी बनाऊँ।
मेरे अन्नपूर्णालयों में तू
क्यों न जलाती अपना सुधा ज्वाल
अगणित नीराजन माल
हे सुधा-बाला !

अंदर की माया करने द्रवित
चली आओ मेरे हृदय की शंपा !
मुझको अभय दान देकर
मेरे मन की गहराई में जाकर
देखो देखो हे !
मुक्ताओं में रत्नोपम
मेरी प्यारी !
मानस सागर मंथन शीला !
हे सुधा बाला !
हृदय के उजाला !
अंदर की माया करने द्रवित।
चली आओ मेरे हृदय की शंपा !

संक्षिप्त कवि-परिचय

1. श्री गुरजाड अप्पाराव—(जन्म 1861 : मृत्यु 1915)

ये विजयनगरम् के निवासी थे। आधुनिक तेलुगु कविता के ये शुक्रतारा थे। भाव और अभिव्यक्ति में स्वतंत्रता के प्रमी थे। कविता के द्‍वारा सामाजिक सुधार की भावना जनता में जगाना चाहते थे और तदर्थ कविता का उपयोग किया। कविता में शिष्ट जनों के द्‍वारा बोली जानेवाली व्यवाहरिक भाषा का प्रयोग सर्व प्रथम इन्होंने किया और आगे के कवियों के मार्ग-दर्शक बने। कविता के अलावा इनका कन्या शुल्कमु नामक नाटक भी बहुत प्रसिद्‍ध है। इन्होंने बहुत सी कहानियाँ भी लिखी हैं।

2. श्री कट्टमंचि रामलिंगा रॆड्डी—(जन्म 1880 : मृत्यु 1951)

कट्टमंचि नामक गाँव में जन्म लेकर और मद्रास में स्नातक बनकर इन्होंने कॆंब्रिज विश्व विद्‍यालय में अर्थ शास्त्र में उच्चतम उपाधि प्राप्त की। ये प्रसिद्‍ध राजनीतिवेत्ता, अर्थ शास्त्र वेत्ता तथा शिक्षा वेत्ता थे। साहित्य के क्षेत्र में ये उच्च कोटि के समालोचक थे। इनका "कवित्व तत्व विचारमु" नामक आलोचनात्मक ग्रंथ उनकी भावुकता और ऊच्च कोटि की साहित्यिकता का परिचायक है जिसमें उन्होंने कलापूर्णोदय और प्रभावती प्रद्‍युम्न जैसे प्रसिद्‍ध काव्यों की विशद समालोचना की। काव्य के क्षेत्र में 'मुसलम्म मरणमु' और "नवयामिनी" नामक ग्रंथ हैं।

3. श्री वेंकट पार्वतीश्वर कवि-द्‍वय—

ये कवि श्री बालांत्रपु वेंकटराव और श्री ओलेटि पार्वतीशम् हैं। श्री वेंकटराव का जन्म सन् 1880 में और श्री पार्वतीशम् का 1885 में हुआ। श्री पार्वतीशम् की मृत्यु 1955 में हुई। तेलुगु में रहस्य भावना प्रधान भाव कविता के ये प्रवर्तक माने जाते हैं। इनकी "एकांत सेवा" नामक कविता इस कोटि की कविता धारा की प्रथम रचना है जिसका एक अंश इस पुस्तक में उद्‍धृत है। बृंदावनमु, भाव-संकीर्तनमु आदि इनकी अन्य रचनाएँ हैं।

4. श्रीरायप्रोलु वेंकटसुब्बाराव—(जन्म 1892)

इन्होंने शांतिनिकेतन में विश्व कवि श्री रवींद्रनाथठाकुर के यहाँ कुछ समय रहे। तृणकंकणमु, कष्ट-कमल, स्वप्न-कुमारमु, जडकुच्चुलु आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं जिनमें छायावाद के समकक्ष भाव कविता के दर्शन होते हैं। आँध्रदेश के पूर्वौन्नत्य का गान इन्होंने मर्मस्पर्शी ढंग से किया और जनता में आँध्राभिमान को जगाया। साथ ही साथ समूचे भारत के प्रति भक्ति भावना को जगाकर अपनी राष्ट्रीयता का परिचय दिया।

5. तल्लावज्झुल शिवशंकरशास्त्री (श्री शिवशंकरस्वामी)—(जन्म 1892)

इन्होंने 'साहिती समिति' नामक संस्था स्थापित की जिसके द्वारा भाव कविता का अच्छा विकास हुआ। वर्तमान समय में सन्यासाश्रम में हैं। बड़े भावुक और पंडित हैं। हृदयेश्वरी, आवेदना, काव्यवाळी, आदि काव्यों, पद्मावती-चरण-चारण-चक्रवर्ती, कविप्रिया, आदि गीत नाटिकाएँ इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

6. श्री पिंगळि-काटूरि—

श्री पिंगळि लक्ष्मीकांतम् और श्री काटूरि वेंकटेश्वर राव दोनों सहपाठी थे। साहित्य के क्षेत्र में भी पिंगळि-काटूरि के नाम से इन्होंने साथ साथ काव्य सृजन किया। श्रीपिंगळि लक्ष्मीकांतम् का जन्म 1894 और श्री काटूरि वेंकटेश्वर राव का 1895 में हुआ था। इनमें श्री काटूरि अब नहीं रहे। इनकी कृतियाँ हैं, तॉलकरि, सौंदरनंदमु, और पौलस्त्य हृदयमु।

7. श्री माधवपॅद्दि बुच्चिसुंदरराम शास्त्री—(जन्म 1892 : मृत्यु 1950)

ये अध्यापक थे। इनकी कविता कमनीय शब्द चित्रों को प्रस्तुत करती है। भाषा और शैली बहुत कोमल है। इनकी रचनाएँ बृंदावनमु, उमर खय्याम, पंचवटी, शबरी और मृत्युंजयशतक हैं।

8. श्री कविकॉण्डल वेंकटराव—(जन्म 1892 : मृत्यु 1969)

ये वकील थे और राजमहेंद्री के निवासी थे। बड़े भावुक और प्रकृति के उपासक थे। सृष्टि की सब वस्तुओं से इनको प्रेरणा मिलती थी। व्यावहारिक भाषा का प्रयोग मुक्त छंदों में स्वतंत्रता पूर्वक करते थे। रचनाएँ: नॅल बालुडु, प्रकृतिचंदनमु, मातृ देश संकीर्तन और अनेक लोक गीत।

9. श्री विश्वनाथ सप्यनारायण—(जन्म 1895)

आप विजयवाडा के निवासी हैं कालेजों में तेलुगु के प्राध्यापक और प्रिन्सिपल रहकर आजकल अवकाश ले रहे हैं। आपकी प्रतिभा सर्वतो-मुखी है। काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानियाँ, निबंध आदि सब विधाओं में रचना कर आधुनिक तेलुगु साहित्य में आपने अपना अनुपम स्थान बना लिया है। इनकी भाषा और शैली बड़ी प्रौढ़ और पांडित्य-प्रकर्ष पूर्ण है। आपकी रचनाओं में आंध्राभिमान की झलक मिलती है और साथ ही साथ भारतीय संस्कृति के प्रति श्रद्धा परिलक्षित होती है। तेलुगु के अतिरिक्त संस्कृत में भी आपने काव्य लिखे। रचनाएँ: अमृत शर्मिष्ठम् (सं) देवी त्रिशति (सं) आँध्र प्रशस्ति, शृंगार वीथी, ऋतु संहारमु, किन्नॅरसानि पाटलु, रामायण कल्पवृक्षमु, आदि काव्य, वेयिपडगलु; चॅलियलिकट्ट, एकवीर, धर्म-चक्रमु आदि उपन्यास ; छोटी कहानियाँ ; नर्तनशाला, वेनराजु आदि नाटक और कई एकांकी।

10. श्री अडिवि बापिराजु—(जन्म 1895 : मृत्यु 1952)

ये गोदावरी जिले में निवास करते थे। ये अच्छे चित्रकार, कवि, उपन्यासकार और कहानीकार थे। इन्होंने वकालत, अध्यापन, पत्रिका संपादन आदि कार्य किए। आपकी कविता-पुस्तकें गोधूळि, शशिकला आदि हैं। उपन्यास हैं नारायणराव, हिमबिंदु, गोन गन्नारेड्डि आदि।

11. श्री बॉड्डु बापिराजु—(जन्म 1912)

ये पश्चिम गोदावरी जिले के निवासी हैं। व्यापारी हैं। आपकी रचनाएँ:—विपंचि (कविता-संग्रह) कलिक (कहानी-संग्रह) कात्यायनी (बाल गीत)

12. श्री नंडूरि वेंकटसुब्बाराव—(जन्म 1895 : मृत्यु 1957)

ये कृष्णा ज़िले के निवासी थे। कुछ काल तक अध्यापन कार्य किया जिसके बाद वकालत की। आप के "ऍङ्कि पाटलु" बहुत प्रसिद्ध हैं जिनमें अशिक्षित ग्रामीणों के निर्मल प्रेम और भोले जीवन का मनोहर वर्णन मिलता है।

13. श्री दुव्वूरि रामिरॅड्डि—(जन्म 1895 : मृत्यु 1917)

ये नॅल्लूर ज़िले के थे। भाव और कला में स्वतंत्रता प्रिय थे। रचनाएँ कृषीवलुडु, जलदांगना, नक्षत्रमाला, नैवेद्यमु, पानशाला (उमर-खयाम का अनुवाद) आदि।

14. श्री गुर्रं जाषुवा—(जन्म 1895)

ये गुंटूर जिले के निवासी हैं। हाई स्कूलों में तेलुगु अध्यापन का काम करते रहे। आपकी कविता की भाषा और शैली सरल है। आपकी कविताओं में मानवतावाद का स्वर सुनाई पड़ता है। रचनाएं: पिरदौसी, गब्बिलमु, कांदिशीकुडु, स्वप्न-कथा, नेताजी आदि।

15. श्री अब्बूरि रामकृष्णराव—(जन्म 1896)

आप गुंटूर जिले के हैं। आंध्र विश्व विद्यालय में प्राध्यापक और पुस्तकपाल रहे। विशिष्ट पद रचना आपकी काव्य भाषा की एक विशेषता है। प्राचीन छंदों का परिष्कार और नये छंदों का आविष्कार करके आधुनिक तेलुगु छंद के विकास में अपना योगदान दिया। आपकी रचनाएं: ऊहागान, पूर्व-प्रेम, मल्लिकांबा, नदी सुंदरी आदि।

16. श्री देवुलपल्लि वेंकटकृष्ण शास्त्री—(जन्म 1897)

आप पूर्व गोदावरी जिले के हैं। आप भाव-कविता धारा के सर्व प्रसिद्ध कवि हैं। मनोहर कल्पना की ऊँची उड़ान आपकी भावुकता की विशिष्टता है। गीत रचना में आप सिद्धहस्त हैं। आपकी भाषा सुललित और प्रांजल है। आपकी कृतियां कृष्ण पक्षमु, ऊर्वशी, प्रवासमु, कन्नीरु, ऋग्वीथी, बदरिका आदि हैं। कई निबंध भी आपने लिखे हैं।

17. श्री कॉडालि आंजनेयुलु—(जन्म 1897)

ये कृष्णा जिले के निवासी हैं। इनकी कृतियाँ अनेक फुटकर कविताओं में बिखरी पड़ी हैं। पत्रिका संपादन का कार्य किया। बड़े देशभक्त हैं और कई बार जेल हो आये हैं।

18. श्रीमती चावलि वंगारम्मा—(जन्म 1897)

ये पूर्व गोदावरी ज़िले की निवासिनी हैं। बड़ी विदुषी हैं। आपकी कविताएँ कांचन-विपचि में संग्रहीत हैं।

19. श्री नायनि सुब्बाराअ—(जन्म 18

ये नॅल्लूर जिले के हैं। इनकी रचनाएँ सौभद्रुनि प्रणय-यात्रा, फलश्रुति, मातृगीतमुलु हैं। आपकी अभिव्यक्ति बड़ी मर्मस्पर्शी होती है।

20. श्री नोरि नरसिंह शास्त्री—(जन्म 1900)

ये गुंटूर जिले के हैं और वकालत करते हैं। भागवतावतरण (काव्य) सोमनाथ विजय (नाटक), नारायणभट्टु, रुद्रमदेवी (उपन्यास) आदि इनकी कृतियाँ हैं। देवी भागवत का तेलुगु में अनुवाद किया है। भारत की प्राचीन संस्कृति के प्रति इनकी आस्था इनकी कृतियों में व्यक्त होती है।

21. श्री वेदुल सत्यनारायण—(जन्म 1900)

ये भद्राचल के हैं जो आजकल खम्मम जिले में है। इनकी कृतियाँ दीपावली, विमुक्ति, मा तल्लि, आराधना, मुक्तावळी आदि हैं। आप शतावधानी हैं। इनको "गौतमी कोकिल" कहा जाता है।

22. श्री तुम्मल सीतारामभूर्ति चौधरी—(जन्म 1901)

ये गुंटूर जिले के निवासी हैं। इनको "अभिनव तिक्कन्न" कहा जाता है। आपकी रचनाएँ आत्मार्पणमु, राष्ट्रगानमु, उदयगानमु, शबला, धर्म-ज्योति आदि हैं। गाँधीजी की आत्म कथा को पद्य बद्ध किया।

23. श्री कॉडालि वेंकटसुब्बाराव—(जन्म 1904 : मृत्यु 1932)

इनकी कविता में प्राचीन वैभव के प्रति आदर और गौरव के भाव व्यक्त होते हैं। रचनाएँ: हंपीक्षेत्रमु गुरु-दक्षिणा आदि। प्रस्तुत संग्रह में विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक विद्यारण्य की महिमा का वर्णन है जो "हंपी क्षेत्र" से उद्धृत है।

24. श्रीमती सौदामिनी—(जन्म 1904)

ये कृष्णा जिले की हैं। प्रख्यात कवि श्री बसवराजु अप्पाराव की धर्म पत्नी हैं। इनकी कविताएँ कई पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं।

25. श्री मल्लवरपु विश्वेश्वर राव—(जन्म 1906)

ये गोदावरी ज़िले के हैं। शांति निकेतन में कुछ समय तक विद्या प्राप्त की। अंग्रेज़ी और तेलुगु की पत्रिकाओं के उप-संपादक रहे। रचनाएँ: कई गीत, कल्याण-किंकिणी, रवींद्रनाथ ठाकुर की कुछ कृतियों का अनुवाद आदि।

26. श्री उमर अलीशा—(जन्म 1885 : मृत्यु 1945)

आप पूर्व गोदावरी जिले में रहते थे। आपकी रचनाएँ पद्मावती, मणिमाला, विचित्र बिल्हणीयमु, उमर खय्याम, वाल्मीकि रामायण का तेलुगु अनुवाद आदि हैं।

27. श्री बसवराजु अप्पाराव—(जन्म 1894 : मृत्यु 1933)

ये कृष्णा ज़िले के हैं। कुछ समय तक आंध्र पत्रिका के उप-संपादक रहे; फिर वकालत की। रचनाएँ: फुटकर गीत; वायुसंदेशमु

28. श्री इंद्रकंटि हनुमच्छास्त्री—(जन्म 1911)

आप गोदावरी ज़िले के हैं। हाई स्कूलों में संस्कृत के अध्यापक रहे। आपकी कृतियाँद क्षाराममु; स्वप्न वासवदत्ता, प्रतिमा (नाटकों का अनुवाद) तॅलुगु वीणा (गीत) विजयदशमी (कहानी संग्रह) व्यासावळी (समीक्षा) हैं।

29. श्री वानमामलै वरदाचार्य—(जन्म 1918)

ये तॅलंगाना के हैं। रचनाएँ: मणिमाला, पोतन्न।

30. श्री करुणश्री—(जन्म 1913)

आप गुंटूर मंडल के हैं। संस्कृत और तॅलुगु के अतिरिक्त हिन्दी के भी आप बड़े पंडित हैं। कालेज में अध्यापन करते हैं। रचनाएँ: करुणश्री, उदयश्री, विजयश्री आदि हैं। आपकी कविता चलती भाषा में बड़ी मधुर होती है।

31. श्री मधुनापंतुल सत्यनारायण—(जन्म 1914)

आप पूर्व गोदावरी ज़िले के हैं। 'सूर्यरायांध्रनिघंटु' (बृहत् तॅलुगु कोष) में कुछ समय तक काम किया। बाद में हाई स्कूलों में अध्यापक बने। आँध्रों के इतिहास को आँध्र-पुराण के नाम से पद्य बद्ध किया।

32. श्रीपल्ला दुर्गय्या—(जन्म 1915)

वर्तमान तॅलंगाना के निवासी हैं। कालेज में अध्यापक हैं। रचनाएँ: पालवॅल्लि, गंगिरॅद्दु।

33. श्रीपुट्टपर्ति नारायणाचार्य—(जन्म 1915)

आप अनंतपुर जिले के निवासी हैं। बहु भाषाविद् हैं। व्याकरण और अलंकार शास्त्रों का अच्छा अध्ययन किया है। तॅलुगु में पॅनुकॉण्ड लक्ष्मी, शाहजी, अग्निवीणा, शिव-तांडव और संस्कृत में शिव सहस्रमु आदि रचनाएँ आपने की हैं। "शिव-तांडव" नाद-सौंदर्य प्रधान भावुक रचना है।

34. श्रीबोयि भीमन्न—(जन्म 1918)

ये गोदावरी ज़िले के निवासी हैं। आँध्र प्रदेश सरकार में अनुवादक का काम करते हैं। दीपसभा आदि इनकी कृतियाँ हैं।

35. डॉ. पाटिबंड माधव शर्मा—(जन्म 1910)

आप कृष्णा जिले के निवासी हैं। आपकी कृतियाँ चारुणि (ऐतिहासिक काव्य) राजशिल्पी, इंद्राणी (ऐतिहासिक उपन्यास) नागानंदमु, विक्रमोर्वशीयमु (अनुवाद), "आँध्र महाभारतमु: छंद: शिल्प" (पी. एच-डी का शोध प्रबंध) आदि हैं। उस्मानिया विश्वविद्यालय में तॅलुगु विभाग के रीडर हैं।

36. श्री पैडिपाटि सुब्बराम शास्त्री—(जन्म 1918)

ये कृष्णा जिले के निवासी हैं। उषा (नाटक) जातीय भारती, तूणीरमु (काव्य) आदि इनकी रचनाएँ हैं।

37. श्री शंखवरम् राघवाचार्य—(संवत्)

ये अनंतपुरम् ज़िले के हैं। वाल्मीकि (काव्य), फुटकर गीत और कई खंड काव्य आपकी रचनाएँ हैं। मेघदूत का अनुवाद किया है।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ-संख्या	कविता की पंक्ति-संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
19	17	जानती	जानते
21	11	सामाज्य	साम्राज्य
43	8	पाये ' ।।	पाये ।। "
45	17	विश्वं भर	विश्वंभर
53	9	भेट	भेंट
55	11	प्रेमु	प्रेमा
57	18	फूलों	फूलों
61	4	मृत्युजय	मृत्युंजय
67	19	कालयस	कालायस
71	12	अर्थ ?	अर्थ ।
79	1	रॅड्ि	रॅड्ि
107	5	पाषाणों ने ।।	पाषाणों ने
109	17	मुझपर	तुझपर
119	10	कैशल	कौशल
127	13	नयनाचल	नयनांचल
137	2	प्रेमलता-	प्रेमलता
163	11	जन्मांत	जन्मांतर
181	8	स्वदिष्ट	स्वादिष्ट
183	12	धीरे	धीर
187	2	वर्ष	वर्ष
187	5	सर्व	सर्व
199	14	तझे	तुझे
203	पाद टिप्पणी	पूर्प	पूर्व
215	22	यहृ	यह
221	14	बाहय	बाह्य
251	8	स्वर्ग	स्वर्ग